October 2022

अरफ़ात किरण

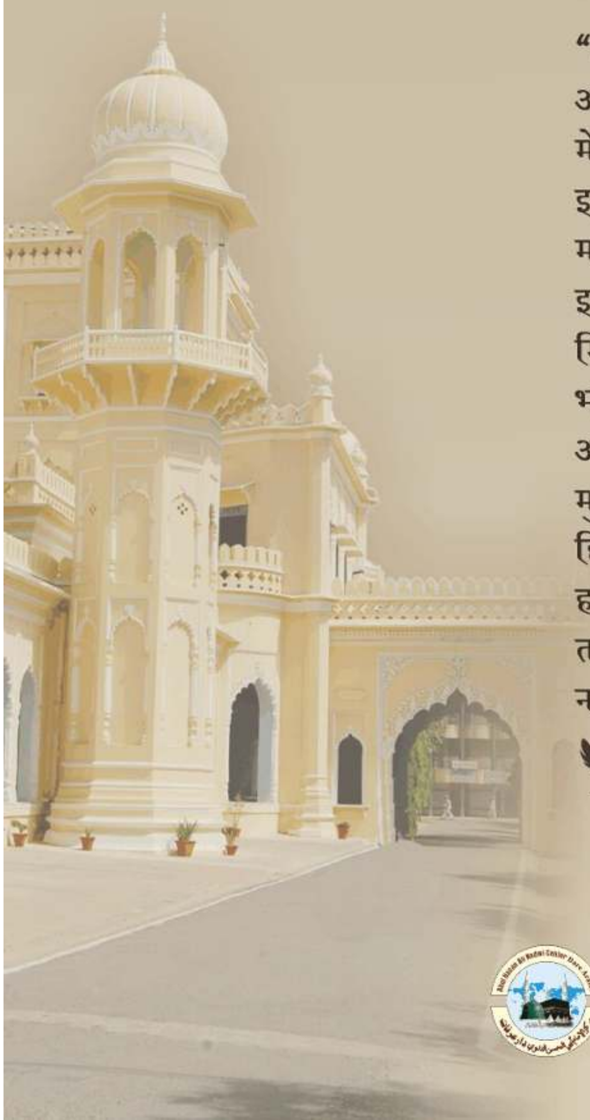

मकातिब व मदारिस की अहमियत

"एक ऐसे मुल्क में जो अपने रक़्बे के बजाए एक मुल्क के बरको चक और अपनी आबादी के लिहाज़ से पूरी दुनिया के आबादतरीन मुल्कों में से है, किसी हुकूमत को अपने इन्तिज़ामात पर इन्हिसार और इसरार नहीं करना चाहिए, यहां अंग्रेज़ों के अहद से पहले निजी मकातिब और मदारिस का एक जाल बिछा हुआ था, उनसे इल्म की इशाअत और मुल्क को शाइस्ता व तालीमयाफ़्ता बनाने में जो मदद मिली, उसका अंग्रेज़ मुअर्रिख़ीन ने भी एतराफ़ किया है, अंग्रेज़ों ने भी अपने दौरे हुकूमत में उन मकातिब व मदारिस को बरक़रार रखा और बाज़ औक़ात उनकी हिम्मत अफ़ज़ाई की, हमको हुकूमत से मुतालबा करना चाहिए कि वह फिर उन मकातिब व मदारिस की हिम्मत अफ़ज़ाई करे, हुकूमत अगर इस बात के लिए फ़िक्रमंद और हरीस है कि मुल्क की आबादी का ज़्यादा से ज़्यादा हिस्सा ख़्वान्दह तालीमयाफ़्ता बन जाए तो उसको मकातिब को तस्लीम करने में उज़्र नहीं होना चाहिए।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

दीनी मदारिस का वजूद

मिल्लत की एक नागुज़ीर ज़रूरत

"आज की फ़िज़ा में तरह–तरह के नारे, तरह–तरह के प्रोपगन्डे, तरह–तरह के एतराज़ात इन दीनी मदारिस पर किये जा रहे हैं, एतराज़ात और तानों का एक सैलाब है जो उन मदारिस की तरफ़ बहाया जा रहा है।

ख़ूब समझ लें! यह इस्लाम दुश्मनी है, इसलिए कि इस्लाम के दुश्मन इस हक़ीक़त से वाक़िफ़ हैं कि इस रूए ज़मीन के ऊपर जो तबक़ा अलहम्दुलिल्लाह इस्लाम के लिए ढाल बना हुआ है, वह यही बोरियानशीनों की जमाअत है। उन्हीं बोरियों पर बैठने वालों ने अलहम्दुलिल्लाह इस्लाम के लिए ढ़ाल का काम किया है। यह लोग जानते हैं कि जब तक मौलवी इस रुए ज़मीन पर मौजूद है इंशाअल्लाह सुम्मा इंशाअल्लाह इस ज़मीन से इस्लाम का नाम नहीं मिटाया जा सकता और यह एक आम मुशाहदा है कि जिस जगह पर बोरिया नशीन मौलवी ख़त्म हो गए वहां इस्लाम का किस–किस तरह हुलिया बिगाड़ा गया और इस्लाम को मिटाने की साज़िशें किस तरह कामयाब हुईं।

आज अमरीका केनेडा और यूरोप की यूनिवर्सिटयों में भी इस्लामी तालीम हो रही है। इस्लाम पढ़ाया जा रहा है, वहां पर भी हदीस व फ़िक़ और तफ़सीर की तालीम का इन्तिज़ाम है। बज़ाहिर बड़ी तहक़ीक़ के साथ काम हो रहा है। लेकिन वह दीन की क्या तालीम हुई जो इन्सानों को ईमान की दौलत भी न अता कर सके, सुबह से शाम तक इस्लामी उलूम के समन्दर में ग़ोते लगाने के बावजूद नाकाम ही लौटते हैं और उसके क़तरे से हलक़ भी तर नहीं करते। मग़्रिब की इन तालीमगाहों में "कुल्लियतुश्शरीयह" भी है और "कुल्लियतु उसूलुद्दीन" भी, लेकिन इसका कोई असर ज़िन्दगी में नज़र नहीं आता। इन उलूम की रूह फ़ना कर दी गयी है।

बग़दाद वह शहर है जहां सदियों तक आलमे इस्लाम का पाया–ए–तख़्त रहा है। जब मैं वहां पहुंचा तो किसी ने बताया कि यहां ऐसे किसी मदरसे का नाम व निशान नहीं है जहां इल्मे दीन की तालीम दी जाती हो। अब दीन की तालीम के लिए यूनिवर्सिटयों की फ़ैकेलिटी हैं। उनके असातज़ा को देखकर यह पता लगाना मुश्किल होता है कि आलिम तो क्या यह मुसलमान भी हैं या नहीं? वहां शेख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी के मज़ार मुबारक के क़रीब एक मस्जिद में मकतब क़ायम है, जिसमें एक क़दीम उस्ताद थे, जिन्होंने पुराने तरीक़े से पढ़ा था, मैं उन्हें तलाश करता हुआ उनकी ख़िदमत में पहुंच गया, देखकर मालूम हुआ कि वाक़्यतन पुराने तर्ज़ के बुज़ुर्ग हैं, उन्होंने फ़रमायाः मैं आपको नसीहत करता हूं, मेरा यह पैग़ाम आप अपने मुल्क के अहले इल्म व अवाम तक पहुंचा दीजिएः

"अल्लाह के लिए हर चीज़ को बर्दाश्त कर लेना, मगर मदरसों के ख़त्म होने को हरगिज़ बर्दाश्त न करना, इस्लाम के दुश्मन इस राज़ से वाक़िफ़ हैं कि जब तक यह सीधा–सादा बोरिये पर बैठने वाला मौलवी इस मुआशरे में मौजूद है, मुसलमानों के दिलों से ईमान को खुर्चा नहीं जा सकता।"

शेख़ुल इस्लाम जस्टिस मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

(इस्लाही ख़ुत्बातः 7/90-94)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक : 10 अक्टूबर 2022 ई0 वर्ष : 14

संरक्षक : हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

सह सम्पादक

मो0 नफ़ीस ख़ॉ नदवी

मुद्रक

मो0 हसन नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

अहले इल्म की फ़ज़ीलत

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"बेशक दुनिया क़ाबिल-ए-लानत है और जो कुछ दुनिया में है वह भी मुस्तहिक़-ए-लानत है सिवाय अल्लाह की याद के और उस चीज़ के जिसको अल्लाह पसंद करता हो या आलिम और मुतअल्लिम के यानि इल्म से इश्तिग़ाल रखने वालों के।"

सुनन तिरमिज़ी: 2492

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली, यू0पी0.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉं, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण, मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू0

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

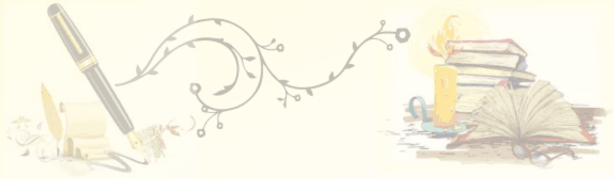

हवासो होश गुम हैं ...

नतीजा–ए–फ़िक्र: अकबर इलाहाबादी

तरीक़े इश्क़ में मुझको कोई कामिल नहीं मिलता
गए फ़रहाद व मजनू अब किसी से दिल नहीं मिलता

भरी है अंजुमन लेकिन किसी से दिल नहीं मिलता
हमीं में आ गया कुछ नुक़्स या कामिल नहीं मिलता

पुरानी रोशनी में और नई में फ़र्क़ इतना है
कभी क़ाज़ी नहीं मिलते कभी क़ातिल नहीं मिलता

हरीफ़ों पर ख़ज़ाने हैं खुले यहां हिज्रे गेसू है
वहां पे बिल है और यहां सांप का भी बिल नहीं मिलता

छिपा है सीनाओ रुख़ दिल सतां हाथों से करवट में
मुझे सोते में भी वह हुस्न से ग़ाफ़िल नहीं मिलता

हवासो होश गुम हैं बहरे इरफ़ाने इलाही में
यही दरिया है जिसमें मौज को साहिल नहीं मिलता

किताबे दिल मुझे काफ़ी है अकबर दर्से हिकमत को
मैं इसपन्सर से मुस्तग़ना मुझसे मिल नहीं मिलता

इस अंक में:

इस्लामी मदरसों की ज़रूरत...3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

आज़ाद दीनी मदरसे–इस्लामी शरीअत व तहज़ीब के क़िले.....4

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी

मुसलमानों की समस्याएं – संभावनाएं एवं उनका हल...............6

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

यूरोप इस्लाम का विरोधी क्यों?....................................9

मौलाना सैय्यद मुहम्मद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी

मीडिया तथा मुसलमान..12

मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

मदरसा बोर्ड के द्वारा क्या हो रहा है................................14

मुहम्मद सिबग़त उल्लाह नदवी

विख्यात बाक्सर मुहम्मद अली किले का कुबूल–ए–इस्लाम....16

मुफ़्ती तन्ज़ीम आलम क़ासमी

मीडिया और दीनी मदरसे...19

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

सम्पादकीय

इस्लामी मदरसों की ज़रूरत

— बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

आज़ाद हिन्दुस्तान का ख़्वाब सबसे पहले मुसलमान उलमा ने देखा। अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद का फ़तवा शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब देहलवी (रह0) (मृत्यु: 1824ई0) ने दिया और उसकी अमली कोशिशों का आग़ाज़ हज़रत सैय्यद अहमद शहीद (रह0) (1831 ई0) ने किया। उन्होंने महाराजा ग्वालियर को ख़त लिखा और उनको आज़ादी की लड़ाई के लिए आमादा किया। शामली के मैदान में उलमा ने ही अंग्रेज़ों से लड़ाई लड़ी और क़ुर्बानियां दीं। रेशमी रुमाल तहरीक शेख़ुल हिन्द की क़यादत में चली। गांधी जी को इस मैदान में आने की दावत मौलाना मुहम्मद अली जौहर ने दी और फिर आज़ादी की लड़ाई में उलमा कंधे से कंधा मिलाकर लड़ते रहे। इसीलिए आज़ाद हिन्दुस्तान में मौलाना अबुल कलाम आज़ाद को पहला शिक्षामंत्री बनाया गया। यह सारी हक़ीक़तें एक तरफ़! इस मुल्क के लिए इस्लामी मदरसों की इफ़ादियत इन हक़ीक़तों से खुलकर सामने आती है लेकिन मदरसों की बुनियादी तौर पर जो क़ीमत है वह मदरसों का वह निज़ामे तालीम है जो इन्सानों को इन्सान बनाता है, बक़ौल हज़रत मौलाना अली मियां (रह0) के:

"मदरसा सबसे बड़ी कारगाह है, जहां आदमगरी और मरदुमसाज़ी का काम होता है, जहां दीन के दाई और इस्लाम के सिपाही तैयार होते हैं, मदरसा आलमे इस्लाम का पावर हाउस है, जहां से इस्लामी आबादी बल्कि इन्सानी आबादी में पावर सप्लाई होता है, मदरसा वह कारख़ाना है जहां से क़ल्ब व निगाह और ज़हन व दिमाग़ ढलते हैं, मदरसा वह मुक़ाम है जहां से पूरी कायनात का इहतिसाब होता है और पूरी इन्सानी ज़िन्दगी की निगरानी की जाती है, जहां का फ़रमान पूरी आलम पर नाफ़िज़ है, आलम का फ़रमान उस पर नाफ़िज़ नहीं।" (पा जा सुराग़–ए–ज़िन्दगी: 90)

इस वक़्त अगर अख़लाक़ व इन्सानियत की मुरझाई हुई खेती को कहीं से पानी मिल रहा है तो यह वह इस्लामी मदरसे हैं, वरना आम दानिशगाहों को जिस तरह एक बिज़नेस बना लिया गया है वह दुनिया के सामने है। आम तौर पर कालिजों और यूनिवर्सिटयों में जिस तरह बदअख़लाक़ियों की गर्मबाज़ारी है, वह ख़ुद वहां पढ़ाने वालों और इन्तिज़ाम करने वालों के लिए किसी सूहाने रूह से कम नहीं। कहीं–कहीं इन मदारिस पर भी अब अस्री दानिशगाहों की छाप पड़ती नज़र आने लगी है, लेकिन अब भी यह मदारिस अपनी बुनियादों के साथ जारी हैं और आज भी वहां अख़लाक़ व मुहब्बत, शराफ़त व इन्सानियत की जो तालीम दी जाती है और तलबा की जिस तर्ज़ पर तरबियत करने की कोशिश होती है, वह इस मुल्क की भी ज़रूरत है और दुनियाए इन्सानियत की ज़रूरत है। अगर यह मदारिस न रह जाएं तो इन्सानियत की खेती ख़ुश्क़ होने लगे और ख़ुदगर्ज़ी की जो आग लगी है वह सबको जलाकर ख़ाक़स्तर कर दे।

ज़रूरत है इन मदारिसे इस्लामिया के तहफ़्फ़ुज़ की, उनके अन्दर सही रूह पैदा करने की और बाहर की आलाइशों से उनकी फ़िज़ा को पाक रखने की ताकि यहां से जो पैग़ामे मुहब्बत दुनिया को दिया जाता रहा है वह जारी है और लोगों को सही रास्ता मिलता है। भाईचारा व मुहब्बत, हमदर्दी व ग़मख़्वारी इन मदरसों में दिया जाता रहे और इन्सान को इन्सानियत की वह सौग़ात मिलती रहे जो शायद कहीं और न मिल सके और हर तरह के माद्दी फ़ायदों से बुलन्द होकर सोचने का जो जज़्बा यहां पैदा किया जाता है, वह पैदा किया जाता रहे और ज़हन व फ़िक्र और क़ल्ब व दिमाग़ को वह सही ग़िज़ा मिलती रहे जो उन मदारिसे इस्लामिया का इम्तियाज़ रहा है।

आज़ाद दीनी मदरसे - इस्लामी शरीअत व तहज़ीब के क़िले

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मुसलमानों के बाज़ हल्क़ों में संजीदगी के साथ यह सवाल पैदा हो गया है कि अरबी मदरसों की इस इन्क़िलाबी ज़माने में क्या ज़रूरत है और उनके न होने से हमारी ज़िन्दगी का कौन सा ख़ाना ख़ाली रहता है?

इस सिलसिले में चन्द बुनियादी हक़ाएक़ का समझ लेना ज़रूरी है जो इस मसले की मुबादी का काम देंगेः

पहली चीज़ यह कि मुसलमान क़ौम का मिज़ाज और क़वाम दुनिया की तमाम क़ौमों से मुख़्तलिफ़ है। मज़ाहिब, उम्मते मुस्लिमा के ख़मीर और तरकीब में दाख़िल है, यह क़ौम किसी जगह और किसी वक़्त भी ग़ैर मज़हबी नहीं हो सकती, बल्कि मज़हब और एक मुतअय्यन मज़हब इस्लाम के बग़ैर इसका तसव्वुर मुमकिन नहीं, मज़हब उसके फ़िक्र व अमल का मरकज़, उसके कामों की सेहत व ग़लती, उसकी तरक़्क़ी व तनज़्ज़ुली की मीज़ान, उसकी सेहते तबई और इन्हिराफ़े मिज़ाज का मिक़यास है।

दूसरी बात यह कि इस उम्मत की बुनियाद एक ख़ास क़ानून "शरीअत" और एक ख़ास दस्तूर "क़ुरआन व हदीस" पर है। यह क़ानून मुकम्मल और यह दस्तूर मुन्ज़बित है। इस उम्मत को दुनिया की दूसरी क़ौमों के मुक़ाबले में यह इम्तियाज़ हासिल है कि उसकी ज़िन्दगी और फ़िक्र का सरचश्मा बदलते हुए इन्सानी इज्तिहादात व तजुर्बात और ग़ैर क़तई नज़रियात के बजाए "वही–ए–इलाही" है। दुनिया की दूसरी तहज़ीबों के बरख़िलाफ़ उसकी तहज़ीब व तमद्दुन की बुनियाद दीवारों और सुतूनों, मीनारों और गुम्बदों, काग़ज़ के शीराज़ों, तस्वीरों के नुक़ूश और मौसिक़ी के आलात पर नहीं है, बल्कि चन्द अब्दी हक़ाएक़, चन्द उसूल व नज़रियात और उस मख़सूस अख़लाक़ी फ़लसफ़े पर है जो वही से माख़ूज़ और उसका पैदा किया हुआ है। दुनिया की दूसरी खुद रो और खुद साख़्ता क़ौमों के बरख़िलाफ़ उसके मुस्तक़बिल की बुनियाद उसके माज़ी पर है। उसके सामने ज़िन्दगी का एक बुलन्द तरीन मेयार और तरक़्क़ी का आख़िरी नमूना है और यह नमूना गुज़र चुका है, लेकिन तारीख़ी व तहरीरी तौर पर महफ़ूज़ है। यह सुन्नते रसूल (स0अ0व0), उस्वा–ए–सहाबा और ख़िलाफ़ते राशिदा का अहद है, सुन्नत और सल्फ़ की जो अहमियत इस्लामी तालीमात में है, ग़ालिबन किसी और दूसरे मज़हब की तालीम में नहीं है।

यह चीज़ भी क़ाबिले ज़िक्र है कि दीन का मफ़हूम जितना इस्लाम में वसीअ व हमागीर है, दूसरे किसी मज़हब में नहीं है, बल्कि अगर देखा जाए तो इस्लाम के सही नुक़्ता–ए–नज़र और तालीमाते नबवी के मुताबिक़ सच्चे मुसलमान की पूरी ज़िन्दगी दीन है और नियत के तग़य्युर से उसका हर काम इबादत है। इसलिए इसमें दीन व दुनिया की वह तक़सीम नहीं है जो मसीही मज़हब में है। न दीन व दुनिया के शोबे और उनके अशख़ास इस तरह अलाहदा–अलाहदा और उनके हुदूद एक–दूसरे से इस तरह मुमताज़ हैं जिस तरह ईसाईयों में, मज़हब मुसलमान की ज़िन्दगी में जल्द मुअस्सिर होता है। अगर उसकी ज़िन्दगी के मसाएल निहायत होशियारी और एहतियात के साथ दीन की रोशनी में और उसकी मुसालहत और समझौते से तय न किये जाएं तो बहुत आसानी से वह दीन से टकरा जाते हैं और मुसलमान की ज़िन्दगी और उनके मज़हब पर उनका असर पड़ता है। मिसाल के तौर पर सुलह व जंग के क़ानून, बदलाव, लेन–देन के मामले और इज्तिमाई व मुआशरती, सियासी और मआशी मसाएल हैं जिनका मज़हब से गहरा ताल्लुक़ और इस्लामी क़ानून से इरतिबात है, इन मसाएल को तय करने के लिए कितनी दीनी बसीरत और किस क़द्र इल्म की ज़रूरत है।

जिस क़ौम का मिज़ाज इतना नाज़ुक और पेचीदा हो और जिसके मज़हब व क़ानून का दायरा इतना वसीअ हो, उसके इलाज व तिब्बी मशवरे के लिए कैसे मिज़ाजदां व नब्बाज़ और कैसे ख़ादिक़ की ज़रूरत है!

जो तबक़ा या जमाअत मुसलमानों की रहनुमाई के मन्सब की उम्मीदवार हो, उसके लिए ज़रूरी है कि वह उसके क़ानून और दस्तूर से वाक़िफ़ हो। उस सरचश्मे

से सैराब हो जिससे उसकी ज़िन्दगी की नहरें फूटीं हैं और उसकी रगों में इसका आबे हयात जारी है। इन अब्दी हक़ाएक़ का इल्म और उन उसूलों व नज़रियात पर यक़ीन रखता हो, इस अख़लाक़ी फ़लसफ़ा का क़ायल और हामिल हो जिस पर उसके तमद्दुन व तहज़ीब की बुनियाद है, उसके माज़ी से बाख़बर और उसके बुलन्द मेयार और नमूना से मुतास्सिर हो जिस पर उम्मत के हाल व मुस्तक़बिल की तामीर होनी चाहिए।

इस्लाम के निज़ाम—ए—शरई की हिफ़ाज़त और उसके लिए ईसार व क़ुर्बानी सिर्फ़ वही तबक़ा कर सकता है जिसकी ज़हनी और इल्मी तरबियत उसके मुआफ़िक़ हुई है जिसके रग व रेशे में इस निज़ाम की मुहब्बत और उसका इश्क़ व एहतिराम पेवस्त हो गया हो और जिसके क़ल्ब व दिमाग़ की गहराइयों में उसका यक़ीन उतर गया हो। इस्लाम की तारीख़ गवाह है कि जब इस निज़ाम पर कोई ज़र्ब लगायी गयी या उसके ख़िलाफ़ कोई साज़िश की गयी तो हमेशा यही तबक़ा बेचैन हुआ और सर पर कफ़न बांधकर मैदान में उतर आया।

जब अब्बासी सल्तनत की तरफ़ से उम्मत पर जबरिया ख़ल्क़े क़ुरआन का अक़ीदा मुसल्लत किया जाने लगा तो इस ख़तरनाक तहरीफ़ व इल्हाद और उसके ग़ैर इस्लामी अक़ीदे के ख़िलाफ़ वक़्त की सबसे बड़ी शहंशाही के मुक़ाबले में हिफ़ाज़ते दीन के लिए जो शख़्स तने तन्हा मैदान में आया वह जमाअते उलमा का मुमताज़ फ़र्द इमाम अहमद बिन हम्बल (रह0) था, जिसके अज़्म व इस्तिक़ामत और ईमान के सामने हुकूमते वक़्त को झुकना पड़ा और यह अक़ीदा तारीख़ी यादगार बन कर रह गया। आज कितने मुसलमान हैं जो इसका मतलब भी समझते हैं?

बाद के ज़माने में दो जलीलुल क़द्र आलिम शेख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी (रह0) और इमाम इब्ने जूज़ी (रह0) ने इस्लामी निज़ामे अख़लाक़ की हिफ़ाज़त और मुसलमानों की रूहानी व दीनी इस्लाह के सिलसिले में जो ख़िदमात अंजाम दीं, उनके इज़हार की ज़रूरत नहीं। उनके बाद इमाम इब्ने तैमिया (रह0) ने जो इल्मी व अमली ख़िदमात अंजाम दीं, वह अहले इल्म से छिपी हुई नहीं हैं।

अगर दीन और उसके शरई निज़ाम की ज़रूरत है और मुसलमानों को महज़ एक क़ौम बनकर नहीं बल्कि एक साहिबे शरीअत व किताब क़ौम बनकर रहना है तो मज़हब के मुहाफ़िज़ीन व हामिलीन और शरीअत के तरजुमान व शारिहीन की ज़रूरत है और अगर उनकी ज़रूरत है तो ला मुहाला उन मरकज़ और इरादों की ज़रूरत है जो ऐसे शख़्स पैदा कर सकते हैं और यह ज़रूरत मुसलमानों की हर क़ौमी ज़रूरत से अहम है।

ख़िलाफ़ते राशिदा की तर्ज़ की इस्लामी सल्तनत में भी दीनी मदारिसत व तरबियतगाहों की ज़रूरत है, ताकि उम्मत के इस्लामी जिस्म में हर दम ताज़ा ख़ून पहुंचता रहे, अहले नज़र जानते हैं कि जिस निज़ाम की पुश्त पर ऐसा इदारा या तरबियतगाह न हो जो इस क़िस्म के अशख़ास पैदा करता रहे जो इस निज़ाम को चला सकें, अगलों की जगह ले सकें और इस मशीन में फ़िट हो सकें, इस निज़ाम की जड़ें हमेशा खोखली और इसकी उम्र हमेशा कम होती है।

अगर बराए नाम इस्लामी सल्तनत भी है तो ऐसे इदारों की ज़रूरत है ताकि उम्मत को अपने ज़िम्मेदाराना ओहदों के लिए दीनदार, अमीन और मुसलमानों की ज़रूरत समझने वाले कारकुन मिल सकें।

लेकिन अगर किसी इस्लामी मुल्क में बदक़िस्मती से इस्लामी हुकूमत न हो तो वहां ऐसे इदारो की ज़रूरत शदीद तर हो जाती है। अगर कोई जमाअत किसी सही इस्लामी हुकूमत की कुछ न कुछ क़ायम मक़ामी कर सकती है और हिफ़ाज़ते दीन का फ़र्ज अंजाम दे सकती है तो वह जमाअते उलमा है, चुनान्चे इसी नुक़्ते की वजह से इस्लामी सल्तनत के ज़वाल के वक़्त हज़रत शाह वली उल्लाह (रह0) और उनके ख़ानदान ने इस्लामी तालीम और दीनी दर्स व तदरीस का निज़ाम क़ायम किया, जिसने बड़ी हद तक एक अच्छी इस्लामी रियासत की दीनी ज़रूरतें पूरी कीं, अहले बसीरत जानते हैं कि इल्मी हैसियत से इस्लाम हिन्दुस्तान में उन मोमालिक से बेहतर हालत में है जहां बराए नाम इस्लामी सल्तनत मौजूद है।

जब हिन्दुस्तान में हुकूमते मुग़लिया का चिराग़ गुल हो गया और मुसलमानों का सियासी क़िला उनके हाथों से निकल गया तो बालिग़ नज़र और साहिबे फ़रासत उलमा ने जा—बजा इस्लाम की शरीअत के तहज़ीब व क़िले तामीर कर दिये, उन्हीं क़िलों का नाम "अरबी मदारिस" है और आज इस्लामी शरीअत व तहज़ीब उन्हीं किलों में पनाह लिए हुए है और उसकी सारी क़ूव्वत व इस्तहक़ाम उन्हीं क़िलों पर मौक़ूफ़ है।

मुसलमानों की समस्याएं
संभावनाएं एवं उनका हल

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

दावत का काम मुसलमानों का खुसूसी फ़रीज़ा क़रार दिया गया है और उसको इस्लामी ज़िन्दगी के क़याम और उसकी असर पज़ीरी का ज़रिया बनाया गया है। इसीलिए दावते इस्लामी के अमल को जितनी हिकमत और मुख़्लिसाना जज़्बे से अंजाम दिया गया उसी क़द्र इस्लामी ज़िन्दगी को मक़बूलियत और कामयाबी हासिल हुई। हमको मुसलमानों की तारीख़ में इसकी वाज़ेह मिसालें मिलती हैं। आग़ाज़े इस्लाम के मक्की दौर में जिस अज़ीमत और इख़्लास से यह काम लिया गया उसके लिहाज़ से मुसलमानों को आगे के लिये ताक़त व इज़्ज़त हालिस हुई।

इस्लाम में दावत के काम में जबर और ज़ोरदस्ती से परहेज़ की तलक़ीन की गयी है और नसीहत व तरग़ीब के तरीक़ों को अपनाने पर ज़ोर दिया गया है और उसके साथ ख़ुद दायी की हुस्ने सीरत व इख़लाक़ की अहमियत बतायी गयी है और तारीख़ बताती है कि इस्लाम की मक़बूलियत और असरअंगेज़ी में दायी की सीरत और हुस्ने अख़लाक़ का अमली इज़हार और मुख़ातिब की नफ़सियात का लिहाज़ मुअस्सिरे आमिल रहा है। बाज़ वक़्त किसी एक वाक़्ये से पूरी–पूरी जमाअत राहे हिदायत पा गयी है। तारीख़ में इसके बहुत से वाक़्यात हैं। सुहल हुदैबिया के वक़्त से दो साल तक जो आपस में मुलाक़ात और मेलजोल का मौक़ा हासिल हुआ उसमें ग़ैर मामूली तरीक़े से दावत के काम को कामयाबी मिली। उसकी बड़ी वजह यह हुई कि ग़ैरों को मुसलमानों और उसके दरमियान मुलाक़ात व मामलात के ज़रिये मुसलमानों के अख़लाक़ व हुस्ने सीरत और इन्सानियत नवाज़ी से वाकिफ़ होने का मौक़ा मिला और उनको इस्लाम और मुसलमानों के सिलसिले में जो ग़लत फ़हमियां थीं वह दूर हुईं।

हमारे मुल्क हिन्दुस्तान की सूरतेहाल भी कुछ ऐसी ही है। यहां मुसलमान बड़ी तादाद में ज़रूर हैं लेकिन उनके हम वतन उनके सही इस्लामी किरदार व अख़लाक़ से वाक़िफ़ नहीं हो पाते, जिसकी बड़ी वजहें दो हैं: एक तो यह कि मुसलमानों का बड़ा तबक़ा खुद इस्लामी अख़लाक़ व किरदार को अख़्तियार करने में कोताह नज़र आता है, वह अपनी इस्लामी सीरत व किरदार का पूरी तरह हामिल नहीं देखा जाता। दूसरी वजह यह है कि ग़ैरों के साथ मेल–जोल में मुसलमान उमूमन इसकी कोशिश भी नहीं करते कि ग़ैरों को इस्लामी अख़लाक़ व मामलात से वाक़िफ़ कराएं और उनके ज़हनों में जो ग़लतफ़हमियां और बदगुमानियां हैं वह दूर करें। उनकी यह कोताही ग़ालिबन इसलिए भी है कि अक्सर मुसलमान उम्मते दावत होने के बावजूद उम्मते दावत होने का एहसास नहीं रखते। अगर उनको यह एहसास हो और वो उसके तक़ाज़े को पूरा करें तो उसके बहुत अच्छे नताएज सामने आएं।

अल्लाह तआला ने इस उम्मत की खुसूसियत यह बतायी है कि (और हमने तुमको ऐसी एक जमाअत बना दी है जो एतदाल वाली (और मेयारी सतह) पर है ताकि तुम लोगों पर गवाह और उन पर नज़र रखने वाले हो, और तुम्हारे लिये रसूल स0अ0 गवाह हों) और फ़रमाया किः (तुम लोग अच्छी जमाअत हो जो लोगों के लिये ज़ाहिर की गयी, तुम नेक कामों को बतलाते हो और बुरी बातों से रोकते हो और अल्लाह तआला पर ईमान लाते हो)

यह उम्मत मोतदिल व मेयारी उम्मत और क़ौमों की गवाह और उन पर नज़र रखने वाली उम्मत है। अपने सामने की क़ौमों पर नज़र रखने और उनकी ग़लतकारियों और गुमराहियों की निशानदेही करने वाली उम्मत है और जब उसको यह मंसब दिया गया तो अब उसका फ़र्ज़ बनता है कि इस मंसब का हक़ अदा करे।

दुनिया के वे देश जहां मुसलमान अकसरियत में हैं और जहां इक़्तिदार उनके हाथों में है वहां इस्लाहे हाल व इस्लाहे फ़िक्र का यह काम ज़्यादातर हुकूमती ज़राए

से किया जाता है और इस तरह मुल्क व क़ौम के लोगों को ग़लत व मुज़िर कामों से रोका और उनसे बचाया जाता है और इस्लाह व दावत का काम अवामी पैमाने पर भी अवामी ज़राए से किया जाता है और यह ज़िम्मेदारी दानिशवरों पर आती है, इससे कि तामील होती है। लेकिन वे मुल्क जहां मुसलमान अक़लियत में हों वहां हुकूमती पैमान पर तो यह काम अंजाम नहीं दिया जा सकता लेकिन "अम्र बिल मारूफ़ नही अलिन मुनकिर" का अमल बहरहाल मुल्क के अहले शुऊर तबक़े के ज़िम्मे आता है और इस तरह यानि दूसरों के निगरां और रहनुमा होने का जो मंसब है उसके तक़ाज़ों की तामील की जा सकती है।

हिन्दुस्तान में हमारे सामने यही सूरतेहाल है। हम बहैसियत मुसलमान के यहां के अपने हमवतनों को उन सब बातों से आगाह कर सकते हैं जिनसे यह आगाह नहीं हैं कि यह आलमे रंग व बू तन्हा अल्लाह रब्बुल आलमीन का बनाया हुआ है और वही तन्हा इसको चला रहा है और उसी ने इसमें बसने वालों की हाजत व ज़रूरत का सामान मुहैया किया है लेकिन इस बात की ताकीद की है कि जिन्दगी को इन्सानियत की सालेह क़दरों को अख़्तियार करते हुए गुज़ारा जाये और अपने मालिक व मोहसिन के एहसान को माना और उसका शुक्रगुज़ार हुआ जाये। और वह इस ज़ाते वहदुहु ला शरीक की इबादत और उसके हुक्मों की ताबेदारी के ज़रिये ही हो सकता है। जो वही के ज़रिये नबी स0अ0 के वास्ते से मालूम होते हैं। उम्मते इस्लामिया का यह फ़रीज़ा रखा गया है कि वह इन बातों से वाकिफ़ कराए और ख़राब और बुरे कामों से बचने की तलक़ीन करे। और नेक बातों पर अमल न करने वालों पर नज़र रखे कि क़यामत के रोज़ जब रब्बुल आलमीन के सामने पेशी होगी तो कह सके कि रब्बुल आलमीन हमने कोशिश की, हमने क़ौमों का अमल देखा, और इस तरह वे अपने आस–पास की क़ौमों के बारे में गवाही दे सकेंगे।

और जवाबदेही के इसी अमल के लिये अल्लाह तआला ने क़यामत का दिन रखा है और हिसाब व किताब के अंजाम पा जाने पर दोबारा राहत व तकलीफ़ की तवील तरीन बल्कि न ख़त्म होने वाली ज़िन्दगी रखी है। वह हिसाब–किताब से हासिल होने वाले नतीजे के मुताबिक़ होगी। ग़लतकारों को सज़ा और नेकाकारों को जज़ा मिलेगी।

दावती अमल का एक बहुत बड़ा फ़ायदा यह है कि उसके ज़रिये इन्सानी ज़िन्दगियों में इस्तवारी पैदा होती है। और नेकी व बदी के फ़र्क़ का समझना और उसके तहत अपनी ज़िन्दगियों को इन्सान के आला मन्सब के मुताबिक़ गुज़ारना आसान हो जाता है। इस्लाम ने ज़िन्दगी को अपने परवरदिगार के हुक्म के मुताबिक़ गुज़ारने की अहमियत व ज़रूरत को बताने के लिये बार–बार नबी भेजे और उनको वही के ज़रिये अपने एहकाम बताए और आख़िर में हमारे नबी हज़रत मुहम्मद स0अ0 मबऊस किये गये। उन्होंने जो तालीमात हमको पहुंचायीं वह इन्सानी जिन्दगी के लिये बहुत ही मौज़ूं और कारामद तालीमात हैं। इनमें ज़िन्दगी की सहूलियतों की रियायत भी रखी गयी है और अमन व शांति व आपसी भाइचारे और ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी का पैग़ाम भी है। इनमें इन्सानों की सलामती और हुस्ने किरदार को अहम जगह दी गयी है। यह इस्लाम की ऐसी सिफ़त है कि इस पर इसका नाम भी "मुस्लिम" से मुश्तिक़ हुआ। जिसके माने अमन व आशिती के हैं। लिहाज़ा मुसलमानों का फ़र्ज़ बनता है कि वे इस पैग़ामें अमन व ख़ैरपसंदी से दूसरों को वाकिफ़ कराएं और बिना किसी ज़ोर ज़बरदस्ती के लोगों को इसको समझने पर आमादा करें। इसके लिये जैसे माहौल और जैसे हालात से वास्ता और ताल्लुक़ हो उनका लिहाज़ करते हुए दावत का काम अंजाम दें। इसमें इन्सानों की ख़ैरख़्वाही भी है और आलमी सतह पर भाई चारा और ख़ैर पसंदी भी है।

दावत के इस अज़ीम काम के लिये हमको जिन वसाएल की ज़रूरत है, उनमें अख़लाक़ी वसाएल भी हैं और तदबीरी वसाएल भी। तदबीरी वसाएल में मुख़ातिब की ज़बान से वाक़िफ़ियत और उनका इस्तेमाल बड़ी अहमियत रखता है। दावत का काम जिस माहौल में करना है, उस माहौल की मुरव्वजा ज़बान को उसके दिलनशीं उसलूब के साथ अख़्तियारक करते हुए इस्तेमाल करना मुअस्सिर ज़रिया साबित हुआ है। इसके लियेउस ज़बान में महारत पैदा करनी होती है। कुरआन मजीद में इसकी तरफ़ इशारा मिलता है, फ़रमाया गयाः (और हमने तमाम (पहले) पैग़म्बरों को (भी) उनही की क़ौम की ज़बान में पैग़म्बर बनाकर भेजा है ताकि उनसे (वज़ाहत

के साथ) बयान करें)

और हम जब हिन्दुस्तान में हैं तो यहां के एतबार से हमको काम करना होगा और हमारा यह मुल्क मुख़्तलिफ़ तहज़ीबों, मुख़्तलिफ़ ज़बानों और मुख़्तलिफ़ मज़हबों का मुल्क है और यह अपने रक़्बे के एतबार से भी बहुत वसीअ है और तबई हालात के लिहाज़ से भी तनव्वो रखता है। और इसी तन्वो की वजह से यहां का दस्तूर बनाने वालों ने इसको जम्हूरी और सेक्युलर दस्तूर का मुल्क तय किया। जम्हूरी इसीलिए कि सबको यकसां हुक़ूक़ हासिल हों और सेक्युलर इसलिए कि किसी एक मज़हब या तहज़ीब वाले को दूसरे के मज़हब और तहज़ीब के साथ ज़बरदस्ती और ज़्यादती करने का हक़ न हो। उसी की बुनियाद पर यहां मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब और मुख़्तलिफ़ सक़ाफ़तों वाले आपस में मिलजुल कर रहते हैं। और मुल्क की सलामती और वहदत के लिये यही बात ज़रिया बनी हुई है। यहां रवादारी की सिफ़त हर फ़िरक़े और हर गिरोह को अख़्तियार करना मुल्क के बुनियादी मफ़ाद में है। इस बात को मुल्क के हर तबक़े को ख़्वाह वह हुकूमती हो या अवामी हो और हर फ़िरक़े और हर तहज़ीब, हर मज़हब और हरज़बान के लोगों को समझता है और रवादारी को न अख़्तियार करने की सूरत में मुल्क के मुख़तलिफ़ तबक़ात की नवययत शीशे के ऐसे गिलासों की मानिन्द हो सकती है जो आपस में टकरांए। ज़ाहिर है सब गिलास टूटेंगे और बेकार हो जाएंगे।

मुल्क के ज़िम्मेदारों और दानिशवरों को इस बात को अच्छी तरह समझना होगा कि किसी तबक़े का ख़्वाह कितना बाअसर हो दूसरे तबक़े पर जबर किसी तहज़ीब का दूसरों की तहज़ीब पर जबर, किसी ज़बान का दूसरी ज़बान पर जबर, सिवाय आपसी कशमकश और टकराव पैदा करने और कोई अच्छा नतीजा नहीं पैदा कर कसता। इन्सानों को अल्लाह तआला की तरफ़ से जो दानाई और हिकमत की जो सलाहियत मिली है उसको सही इस्तेमाल करने से आपस में कुरबत और एक–दूसरे को समझने में आसानी पैदा होती है। और आपस के मेल–जोल अख़्तियार करने से एक दूसरे से फ़ायदा उठाने और फिर अपने तर्जुबे से फ़ायदा उठाने का मौक़ा मिलता है।

और उसके नतीजे में ख़्वाह तहज़ीबें हो या ज़बाने या मज़ाहिब इनके दरमियान एक–दूसरे से फ़ायदा उठाने का मामला चलता है। एक तहज़ीब दूसरी तहज़ीब से एक ज़बान दूसरी ज़बान से हत्ता कि मज़हब के मामले में भी बेहतर और मुफ़ीदतर को मालूम करने में और इस्तिफ़ादा व अख़्ज़ फ़ैज़ करने का फ़ायदा होता है। इस ग़रज़ से दुनिया में डायलाग का भी तर्जुबा किया गया। यह डायलाग यानि आपस में तबादलाए ख़्याल अपनी इफ़ादियत रखता है। इसके ज़रिये इन्सान जुमूद सेनिकलकर वसीअ तर दायरे में आता है और नीचे से उभरकर ऊपर आता है।

उसकी सबसे आला मिसाल हमारे हुज़ूर हज़रत मुहम्मद स0अ0 का तरीक़ेकार था। उनकी रहनुमाई वहीये इलाही के ज़रिये होती थी। आपने जब वहीये इलाही से मिली हुई हिदायतों को अपनी क़ौम के सामने रखा और आपकी क़ौम आपके ख़ानदान ही की थी। उनके सामने बड़े और छोटे का फ़र्क़ व लिहाज़ रखते हुए जब आपने आसमानी रहनुमाई वाली बात रखी तो यह उन लोगों के लिये एक तरह से नयी बात थी। लिहाज़ा उन्होंने सुनने से इनकार किया और कहा कि बस हम जो करते आएं हैं हम उनके अलावा कुछ सुनने के लिये तैयार नहीं। और जब उनको मुख़ातिब किया गया तो कान में उंगली दे लेते और कहते कि हम नई बात नहीं सुनेंगे। लेकिन आपकी बात ऐसी थी कि जिसमें क़ौम का फ़ायदा और हालात की बेहतरी और मुल्क व क़ौम की तरक़्क़ी थी। जब इसमें से किसी के कान में ठीक से पड़ जाती तो उसका ज़हन बदल जाता। हुज़ूर स0अ0 इख़लाक़ व मुहब्बत और ख़ैरख़्वाहाना अंदाज़ से वहीये इलाही से हासिल करदह बात उनके सामने रखते रहे। आप उनके न सुनने पर नाराज़ नहीं होते थे। बल्कि हमदर्दाना रवैये के साथ अपने ख़ैरख़्वाहाना ज़ज़्बे का इज़हार करते और क़ौम के लोगों के ग़ुस्से व गर्मी तक को बर्दाश्त कर लेते थे। आपको अल्लाह तआला का हुक्म भी यही था कि तुम उन पर यह ख़ैरख़्वाहाना बात जबरन मुसल्लत न करो। माने तो माने और न माने तो यह अपना ही नुक़सान करते हैं, तुम पर इसकी ज़िम्मेदारी नहीं है कि तुम ज़बदरस्ती मनवाओ। आपने इस पर अमल किया और इसी को इस्लाम का उसूल बताया कि ख़ैरख़्वाहाना अंदाज़ में अच्छी बातों की तरफ़ बुलाया जाए और मनवाने के लिये मजबूर न किया जाये।

....(शेष पेज 11 पर)

यूरोप इस्लाम का विरोधी क्यों?

मौलाना सैय्यद मुहम्मद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी

ग्यारहवीं सदी ईसवी में यूरोप में व्यक्तिगत और प्राइवेट तौर पर मुसलमानों के शिक्षण केन्द्रों लाभान्वित होने के रूझान पैदा हुए। उस समय यूरोप में शिक्षा पर पाबन्दी थी। रेने मार्सियल त्मदम डंतजपंस ने लिखा है कि बारहवीं सदी ईसवी में जब मुसलमानों के पास केवल स्पेन में सत्तर हज़ार लाइब्रेरियां थीं, यूरोप के बड़े–बड़े शहरों में एक किताब भी मिलनी मुश्किल थी।

एक पश्चिमी लेखक लिखता है: "ग्यारहवीं सदी ईसवी में जिस समय पश्चिम के बड़े–बड़े रईस और जागीरदारों अपनी हालत और अज्ञानता पर गर्व था, उस समय स्पेन में मुसलमानों के कुर्तुबह में एक महान लाइब्रेरी थी, जिसमें केवल हाथ की लिखी हुई साठ हज़ार किताबें थीं।"

एक दूसरा अंग्रेज़ लेखक कहता है: "इस्लामी स्पेन में उस समय घर–घर ज्ञान की चर्चा थी जबकि ईसाई दुनिया में कुछ लोगों को छोड़कर कोई लिखना–पढ़ना नहीं जानता था।"

डोज़ी क्व्रल लिखते हैं: "यूरोप में लोग जिहालत के अंधेरे में चक्कर काट रहे थे। उन्हें कहीं रोशनी नज़र नहीं आ रही थी। रोशनी केवल मुसलमानों की ओर से आ रही थी। ज्ञान व शिल्प, साहित्य, फ़लसफ़ा, कारीगरी और जीवन के दूसरे क्षेत्रों में मुस्लिम समुदाय मार्गदर्शन कर रहा था। बग़दाद, समरक़न्द, बसरा, दमिश्क़, क़ैरवान, मिस्र, ईरान, ग़रनाता और कुर्तुबा ज्ञान व शिक्षा के महान केन्द्र थे। इस्लामी साम्राज्य में छोटे–छोटे मदरसे और मस्जिदें भी बड़े–बड़े किताबघरों से जुड़ी हुईं थी जहां हर व्यक्ति को पढ़ने की स्वतन्त्रता थी जबकि यूरोप के केन्द्रीय शहर देहातों की तरह थे, जहां न तो ज्ञान था और न आबादी। यूरोप भौतिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं शिक्षा हर प्रकार से बहुत पिछड़ा हुआ था।"

जर्मन प्राच्यविद (व्तपमदजंसपेज) डॉक्टर ज़ेगरेड होन्कि अपनी किताब "पश्चिम पर इस्लाम का सूर्योदय हो रहा है" में लिखती हैं: "छः सदियों पहले पूरे यूरोप में केवल पेरिस के मेडिकल कॉलेज में एक छोटी सी लाइब्रेरी थी जिसमें केवल एक किताब थी और वह भी केवल अरबी लेखक की, यह बहुत मूल्यवान और जानकारी से परिपूर्ण थी। उस समय के सारे ईसाईयों के बादशाह लुई ग्यारहवें ने एक बार इस किताब को पढ़ने के लिए लेना चाहा तो उसे भी ज़मानत के तौर पर एक बड़ी रक़म जमा करनी पड़ी। लुई का उद्देश्य यह था कि उसके प्राइवेट डाक्टर इस किताब की एक नक़ल तैयार कर लें ताकि जब भी बादशाह को कोई बीमारी हो तो उससे सहायता ली जा सके। यह किताब क्या है एक महान इन्साइक्लोपीडिया है इसमें 1921ई0 तक के सभी पुराने यूनानी उपचार एकत्र कर दिए गए हैं।"

और लिखती हैं: "राज़ी ने मेडिकल साइंस और उपचार के विषय पर जो महान किताबें लिखी हैं वे यूरोप में (1498–1866 ई0) चालिस बार प्रकाशित हुईं। इसमें नक़रस, पथरी, गुदा, गुर्दे और बच्चों की बीमारियों के बारे में चर्चा की गयी है और यह अपने विषय पर विश्वस्नीय स्त्रोत के समान है।"

और लिखती हैं: "अगर हम यह कहें तो इसमें कोई आश्चर्य और हैरत की बात नहीं कि यूरोप ने लगभग तीन सौ साल तक केवल अरबों की ही लिखी हुई किताबों और शोध पर विश्वास किया है।"

एक पश्चिमी चिन्तक कहता है: "अरब ही ग्रहों, विज्ञान, रसायन और उपचार के क्षेत्र में हमारे सबसे पहले अध्यापक हैं।"

मिस्यू लीटरी लिखती हैं: "यदि इतिहास में अरब पूर्ण रूप से नमूदार न होते तो ज्ञान व शिल्प और सभ्यता व संस्कृति में यूरोप की जागरुकता कई सदी और पीछे हो जाती।"

रेनान कहते हैं: "एलबर्ट कबीर हर चीज़ में इब्ने सीना का और सान्तूमा अपने सभी सिद्धान्तो में इब्ने रुश्द का एहसानमन्द है।"

"यूरोप के साइंस के पितामह रोजर बेकन भी अरबों

के शिष्य थे और वह स्वयं अपने शिष्यों को कहते रहते थे कि यदि सही ज्ञान प्राप्त करना है तो अरबी पढ़ना सीखो।"

गोस्ताउ लीबान लिखते हैं: "अरबों ही ने यूरोप को शिक्षा व ज्ञान और सभ्यता व संस्कृति की दुनिया से परिचित कराया। अरब हमारे मोहसिन थे और छः सदियों तक हमारे पेशवा रहे।

सलाहुद्दीन अय्यूबी के दूत ओसामा बिन मुनक़िज़ यूरोप के दौरे पर गए, उन्होनें एक व्यक्ति के आपरेशन की घटना अपने सफ़रनामें में लिखी है कि कुल्हाड़ी से उसका घुटना काटा जा रहा था।"

सोलहवीं सदी ईसवी तक यूरोप ज्ञान व संस्कृति में मुसलमानों से लाभान्वित होता रहा।

सलीबी जंग के दौरान यूरोप में इस्लाम और मुसलमान दुश्मनी का ऐसा ज़हर बोया गया कि वह हर यूरोपीय की रग–रग में भर गयी।

ज्ञान व संस्कृति के क्षेत्र में मुसलमान यूरोप के पहले गुरू का स्थान रखते हैं। इसके बाद भी पश्चिम का हर नागरिक विशेषतयः ज्ञानी इस्लाम और मुसलमान के बारे में संदेह नहीं बल्कि दुश्मनी का ज़हन रखते हैं।

प्राच्यविदों ने ऐसा लिट्रेचर तैयार किया जिससे उनके दिमागों को ताक़त मिली कि मुसलमान उनके क्षेत्रों पर क़ाबिज़ हैं जो यूनान व रोम के अधीन थे।

इस्लाम के तेज़ी से फैलने और मुसलमानों के दुनिया भर में क़ाबिज़ होने से इस विचार में और बढ़ोत्तरी हुई और इससे एक प्रकार का डर पैदा हुआ। तुर्कों की ताक़त और यूरोपीय देशों पर उनका क़ब्ज़ा और उनपर नियन्त्रण न कर पाने के भाव व अनुभव ने इसमें बढ़ोत्तरी की।

अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं सदी ईसवी में यूरोप के बहुत से देशों ने अपने शैक्षिक उन्नति से अपनी रक्षात्मक शक्ति बढ़ाई और अपनी जंगों का रुख़ इस्लाम की ओर मोड़ दिया।

उन्नीसवीं सदी में अधिकतर इस्लामी देशों पर यूरोप का नियन्त्रण हो गया और उन देशों में उन्होंने अपनी शिक्षा व्यवस्था और साहित्य को प्रचलित किया।

लारेंस ब्राउन स्नतमदबम ठतवूदम कहता है: "पहले हम यहूदी ख़तरे से डरते थे, लाल (जापान व चीन) ख़तरे से डरते थे और पूंजीवाद से डरते थे, लेकिन यह विचार ग़लत साबित हुआ। इसलिए कि यहूद हमारे दोस्त निकले, अतः उन पर अत्याचार करने वाला हमारा जानी दुश्मन होगा, फिर दूसरे युद्ध के दौरान पूंजीवादी हमारे समर्थक बने, रहा लाल ख़तरा (जापान, चीन) तो उससे निपटने के लिए बड़ी लोकतान्त्रिक शक्तियां पर्याप्त हैं, अब वास्तविक ख़तरा इस्लामी व्यवस्था और उसके एक व्यापक धर्म होने की हैसियत से एवं अपने पैरोकारों के क्षेत्र को अत्यन्त विशाल कर लेने की असाधारण क्षमता से है। मुसलमान ज़बरदस्त, आश्चर्यजनक हयात बख़्श शक्ति के मालिक हैं। यूरोपीय साम्राज्य के रास्ते में सबसे बड़ी रुकावट अकेले यही (इस्लाम) है।"

एक दूसरा पश्चिमी मार्गदर्शक कहता है, "मेरे ख़्याल से कम्यूनिज़्म यूरोप के लिए कोई ख़तरा नहीं, बल्कि वास्तविक ख़तरा इस्लाम से है, जो हमको प्रत्यक्ष रूप से चैलेंज कर रहा है। मुसलमान हमारी पश्चिमी दुनिया से अलग अपनी एक दुनिया रखते हैं। उनके पास विशुद्ध आत्मिक पूंजी है और वे एक वास्तविक, सच्चे और ऐतिहासिक सभ्यता व संस्कृति के मालिक हैं। मुसलमानों में इस बात की योग्यता है कि वे बिना किसी सहायता व सहयोग के एक नयी दुनिया की बुनियाद रख सकते हैं। मुसलमानों को अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु केवल उस कारोबारी व तकनीकी उन्नति की आवश्यकता है जो पश्चिम ने प्राप्त कर ली है।"

यूरोपीय लेखक इस्लाम के प्रचार का भय खड़ा करते रहते हैं। मुस्लिम समुदाय की योग्यताओं और उनके इतिहास से परिचित होने के कारण उनके अन्दर डर की भावना पायी जाती है बल्कि कमतर होने का भाव, इसके कारण वहां के ज़िम्मेदार ऐसे हालात पैदा करते हैं जिनसे पश्चिम के लोगों में इस्लाम से नफ़रत व दुश्मनी पैदा हो।"

इस्लाम और मुसलमान के इतिहास से परिचित होने और इस्लाम के दोबारा वर्चस्व में आने के भय ने यूरोप के बुद्धजीवियों व राजनीतिज्ञों के दिमाग़ में यह भावना पैदा कर दी है कि ऐसे साधन अपनाएं जाएं कि जिससे यह ख़तरा जिसका यूरोप ने एक हज़ार साल तक सामना किया है दोबारा वापिस न आए। इसमें ऐसे शैक्षिक, राजनीतिक एवं पूंजीवादी साधन अपनाए कि जिनके प्रभाव से मुसलमानों के ज़हन व ख़्याल से वर्चस्व का विचार समाप्त हो जाए।

एक वास्तविकता और है जिसका यूरोप व इस्लाम विरोधियों को भय है कि मुसलमानों में शहादत का शौक़,

दीन के लिए त्याग की भावना, बर्दाश्त की ताक़त, और शारीरिक ताक़त व योग्यता रखने वाले तत्व बहुत हैं और उनके क़ब्ज़े में दुनिया के स्ट्राटेजिक स्थान हैं और भौतिक साधनों परिपूर्ण शक्ति के भण्डार उनके नियन्त्रण में हैं। यही उनके लिए चिन्ताजनक है।

विश्व युद्ध में यूरोप को उन योग्यताओं का अनुभव हुआ। उसके कारण यूरोप की शक्ति मुस्लिम क्षेत्रों पर और मुस्लिम आन्दोलनों पर लगातार नज़र रखती रही हैं।

इन कारणों को ध्यान में रखने के बाद यूरोपीय देश चाहे वे पश्चिमी देश हों या पूर्वीय यूरोपीय देश, उनके रवैयों और कार्यवाहियों को समझना आसान है।

एक बात और स्पष्ट करने योग्य है कि इस्लाम विरोधी आन्दोलनों, षडयन्त्रों और नफ़रत फैलाने वाले लिट्रेचर में राजनीति और सैन्य साधनों का बड़ा हिस्सा रहा है और आज़ादी की जंग में मुसलमानों की क़ुर्बानियों विशेषतयः अलजज़ाएर और अफ़ग़ानिस्तान के इतिहास से यूरोप ने ऐसे लोग तैयार किए जिन्होंने उस उद्देश्य को पूरा किया और वर्तमान समय में पश्चिमी मीडिया इस काम को बख़ूबी अन्जाम दे रहा है और मुस्लिम देशों की सत्ता व सरकारें पश्चिम के इस मिशन को पूरा कर रही हैं।

फ़्रांस और ब्रिटेन के पतन के बाद इस मुहिम का नेतृत्व अब अमरीका ने संभाल लिया है और इसमें उसको सहयूनी (ज़ियोनिज़्म) शक्तियों का पूरा सहयोग प्राप्त है।

पश्चिम के षडयन्त्र और कार्यवाहियों के बावजूद अलहम्दुलिल्लाह इस्लाम फैल रहा है और मुसलमानों में त्याग की भावना और दीन से लगाव बढ़ रहा है और यूरोप की वास्तविकता लोगों के सामने आ रही है। इसका उदाहरण स्वयं वेटिकर की यह रिपोर्ट है जो कुवैत की अरबी पत्रिका "अलमुजतमा" ने अप्रैल 2014 में प्रकाशित की है। वेटिकन की इस रिपोर्ट के अनुसार पूरी दुनिया में सबसे अधिक फैलने वाला धर्म इस्लाम है। इस्लाम विरोधी मुहिम के बावजूद एक साल में मुसलमानों की संख्यां ईसाईयों की तुलना में तीन मिलियन बढ़ी है। वेटिकन के बयान के अनुसार एक अरब, तीन मिलियन, बाइस हज़ार से अधिक है जो ईसाईयों की तुलना में तीन मिलियन से अधिक है। इस समय दुनिया में मुसलमानों की आबादी का अनुपात 19 प्रतिशत है। इस्लाम कुबूल करने वालों में अधिकतर पश्चिम की ईसाई, यहूदी और दूसरे धर्म के मानने वाले हैं।

शेषः मुसलमानों की समस्याएं-संभावनाएं एवं उनका हल

मगर इसमें अस्ल उसूल यह है कि ख़ैरख़्वाहाना जज़्बा हो कि ग़लत रुख़ अख़्तियार करने वालों और मुज़िर तौर व तरीक़ अपनाने वालों के ग़लत राहों पर चलने से दिल दुखे कि यह अपने भाई बन्द है और अपना नुकसान कर रहे हैं। और यह जज़्बा हो कि हम किस तरह उनको सही राह पर ले आएं। ख़ुद भी अच्छे तौर व तरीक़ पर कारबन्द हों और दूसरें को भी बेहतर राह अख़्तियार करने के लिये दिल में तड़प पैदा हो। यही वह तड़प है जो ख़ैरख़्वाहाना जज़्बे के साथ दूसरों को अपनी तरफ़ खींचती है। और उसके बेहतरीन नजाएज सामने आते हैं।

मुसलमानों को उम्मते दावत का वस्फ़ अता किया गया है कि वे ख़ैर की तरफ़ बुलाएं और शर अख़्तियार करने से मना करें। इस वस्फ़ का तक़ाज़ा है कि हम दूसरों को सही बात बताएं और ऐसा अंदाज़ अख़्तियार करें कि मुहब्बत और ख़ैरख़्वाहाना जज़्बे के साथ हमारी हमदर्दी सामने आये। इस तरह हमारी बात अपनाइयत के साथ सुनी जा सकती है। और जब हम अच्छी बातों की तरफ़ दावत देते हैं तो यह भी हमारी बात को वज़न देती है। और इसके ज़रिये हम ख़ैर को आम करने वाले और इन्सानियत को सलाह व फ़लाह की तरफ़ ले जाने वाले बनते हैं। यह इस मुल्क में हमारा फ़र्ज़ बनता है क्योंकि यहां मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब और मुख़्तलिफ़ तहज़ीबों और ज़बानों के दरमियान हम रहते हैं। और हम उम्मते वहदत हैं तो दावत के इस्लामी उसूलों को अपनाते हुए हम लोगों को शर के रास्ते से हटने और ख़ैर का रास्ता अख़्तियार करने की तरफ़ तवज्जो दिला सकते हैं और यह हमको करना चाहिये। यह इस देश के लिये भी मुफ़ीद है और हमारे वज़न को महसूस कराने वाली बात भी है। और इन्सानियत की सलाह व फ़लाह का भी काम है जिसकी ज़िम्मेदारी बहैसियत एक नेक सीरत और इन्सानित के ख़ैरख़्वाह के हम पर आयद होती है कि हम खुद भी अच्छे इन्सान बने और अपने मालिक रब्बुल आलमीन के हुक्मों पर चलें और दूसरों को भी उसी तरफ़ ध्यान दिलाएं और यह बात हमारे दानिशवरों के तरफ़ से दानिशवरों के साथ और हमारे अवाम की तरफ़ से यहां के अवाम के साथ ख़ैरख़्वाही और दाइयाना रवैया अख़्तियार करने से अंजाम पा सकती है।

मीडिया तथा मुसलमान

मौलाना ख़ालिद सैफुल्लाह रहमानी

रेडियो और टीवी पर प्रोग्राम के दो प्रकार इस समय प्रचलित हैं। कुछ प्रोग्राम हैं जिनको "धार्मिके प्रोग्राम" कहते है। ये लगातार होने वाले प्राग्रामों में अलग अलग संबंध से होते हैं। और कुछ ऐसे हैं जो "धार्मिक प्रचार" कहलाते हैं। ये लगातार प्रोग्राम हैं जो दीनी विषयों से संबंधित है, इनका संबंध मुस्लिम देशों से है। यूरोप के कुछ देशों में मुसलमानों ने कुछ घन्टे प्राप्त कर लिये है जिनमें वो अपने प्रोग्राम प्रस्तुत करते हैं। ऐसा यूरोप के कई देशों में हो रहा है। इसके दो प्रकार हैं। एक प्रकार तो है कि कुछ मुस्लिम व्यापारी घन्टे ख़रीद लेते हैं या जितने घन्टे प्रयोग करते उसका मूल्य चुका देते हैं। उनकी हैसियत विज्ञापन की होती है। ये प्रोग्राम इस्लाम के प्रचार का साधन बनते हैं। इसका अनुभव यूरोप के कई क्षेत्रों में हो रहा है। रेडियो के अतिरिक्त समाचार पत्रों में भी इसका अनुभव किया जाता है। जैसे वो देश ग़ैरमुस्लिम देश है तो मुसलमान को आज्ञा है कि जितने घन्टे जिस शक्ल में भी लें उनमें अपनी मर्ज़ी के प्रोग्राम प्रस्तुत करें और वो प्रोग्राम इतने प्रभावित होते हैं कि कुछ लोग उन प्रोग्रामों के कारण मुसलमान हो रहे हैं। यही स्थिति टीवी में भी हैं। इसमें अलग–अलग चैनल हैं या सयम निश्चित हैं। इसके साथ–साथ कुछ प्राइवेट रेडियो स्टेशन हैं। जिस तरह ईसाई मशीनरीज़ के रेडियो स्टेशनज़ हैं, हरम शरीफ़ की नमाज़ों और हज के दृष्यों को देखकर कितने लोग मुसलमान हो गये तो उसको देखकर दूसरे साल कुछ देशों ने इस पर पाबन्दी लगा दी कि हज फ़िल्म नहीं दिखाई जा सकती, क्योंकि हज के दृष्य देखकर लोग मुसलमान हो रहे हैं।

सऊदी अरब में शाह फ़ैसल ने जब टीवी प्रोग्राम शुरू किया तो वहां के उलमा ने उनका विरोध किया तो उन्होने दलील में कहा कि हम अपना टीवी स्टेशन नहीं रखेंगे तो लोग दूसरे टीवी स्टेशनों के प्रोग्राम देखंगे। अपने टीवी पर कन्ट्रोल करना आसान है, दूसरों के टीवी पर कन्ट्रोल मुश्किल है। इसलिये वहां उस समय से टीवी का रिवाज हुआ। वहां टीवी पर पांच वक़्त की नमाज़ें, हज के समय में हज के दृष्य और दूसरे इस्लामी प्रोग्राम प्रस्तुत किये जाते है। इस बात का विश्लेषण किया गया है कि ख़बरो और चर्चों के लिये लोग टीवी देखते हैं। मगर इसके साथ विज्ञापन के रूप में या सांस्कृतिक प्रोग्रामों के रूप में व्यवहार को ख़राब करने वाले और गुमराह करने वाले, फ़ित्ने के दृष्य नज़र आते हैं। इसका इलाज केवल नेक और नियन्त्रित टीवी है।

इस समय शिक्षा का सबसे बड़ा साधन टीवी है। साइंस, तकनीक और दूसरे ज्ञान टीवी पर प्रस्तुत किये जाते हैं। इनके सारे पाठ टीवी पर आते हैं। इसी प्रकार भाषा भी टीवी पर सीखी जा सकती है। लोग कहते हैं कि रेडियो पर सुनने से भाषा जल्दी आती है लेकिन बोलते समय ज़बान की जो नक़ल व हरकत होती है वो टीवी पर देखकर ज़बान सीखने में और अधिक सहायत सिद्ध होती है। बहरहाल टीवी के फ़ायदे और नुकसान दोनों हैं और ये एक अहम मुक़दमा है। बिलाद अरबिया और दूसरे इस्लामी देशों में टीवी का दावत और इस्लाह के लिये प्रयोग प्रारम्भ हो गया है। इसी तरह इन्टरनेट का मामला है। इसमें दावत की और इस्लाह की साइट कई इस्लामी ग्रुप ने प्राप्त कर ली है और उनके अच्छे असर महसूस किये जा रहे हैं। ये इस्तिफ़ता और इफ़्ता का भी साधन हैं और इश्काल और शुबहात के इज़ाला का भी। बहुत से मदरसों और इस्लामी हल्क़ों में इससे लाभ प्राप्त किया जा रहा है।

संक्षेप में ये कि इस समय रेडियो और टीवी में कई रूप अपनाए जा रहे हैं। कुछ तो "लगातार प्रोग्राम" हैं कुछ में "धार्मिक प्रोग्राम" प्रस्तुत किये जाते हैं। और कुछ में कुछ घन्टे निश्चित हैं। इनमें दीनी प्रोग्राम होते हैं। रेडियो और टीवी दोनों का यही तरीक़ा अपनाया जा रहा है। भारत में अभी इसका अनुभव नहीं किया गया है।

इसलिये यहां ऐसा नहीं हो रहा है। लेकिन रेडियो और टीवी पर कुछ अवसरों पर दीनी प्रोग्राम प्रस्तुत किये जाते हैं। दूसरे देशों में, कुछ अरब की संस्थाओं में, वो इनके द्वारा लाभान्वित हो रही हैं और इस पर बहुत रूपया ख़र्च करती हैं। इनकी न्यूज़ एजेन्सियां भी हैं, उन्होने टीवी के कुछ समय ख़रीद लिये हैं और कुछ ने अपने अलग चैनल स्थापित कर लिये हैं। कुछ जगह जैसे रेडियो में समय लिया जाता है। उन्होने इसी तरह टीवी में समय ले लिया है, और वो उनमें अपना धार्मिक प्रोग्राम प्रस्तुत करते हैं। ऐसी संस्थाएं और कम्पनियां हैं जो स्वय इस्लामी विषयों के कैसेट आडियो (।नकपव ब्ंेमजजम) और वीडियो (टपकमव ब्ंेमजजम) तैयार करती हैं, जो गानों, नाटकों, और संवाद (क्पंसवहनम) पर आधारित होते हैं ये सिलसिला भी बहुत प्रचलित होता जा रहा है।

ऐसे प्रोग्रामों का समाज पर कितना अच्छा असर पड़ रहा है और खुद टीवी वालों में कैसा रूझान पैदा हो रहा है इसका अन्दाज़ा इससे लगाया जा सकता है कि कुछ महीने पहले मिस्र में टीवी प्रोग्राम प्रस्तुत करने में कला की महारत रखने वाली सात औरतों ने इन धार्मिक प्रोग्रामों से प्रभावित होकर पर्दा करने का फैसला कर लिया, इस पर टीवी वालों ने उन्हे नौकरी से निकाल दिया जब उनको निकाल दिया गया तो लोगों ने वो प्रोग्राम देखना बन्द कर दिया। क्योंकि वो इतना अच्छा प्रोग्राम प्रस्तुत करती थीं कि उनकी जगह जब दूसरी फ़नकार औरतें आयीं तो उस प्रोग्राम की ख़्याति समाप्त हो गयी। इससे उनका नुक़सान होने लगा। जिम्मेदारों ने जब ये महसूस किया कि प्रोग्राम पेश करने का इनका अन्दाज़ इतना अच्छा है तो सोच विचार के बाद कमेटी ने उन्हे नौकरी पर बहाल करते हुए पर्दा करने की इजाज़त दे दी कि वो एहतियात के साथ वो प्रोग्राम करें। इन आर्टिस्टों ने कहा कि हम पूरा पर्दा करेंगे, आख़िरकार उनको उनकी मर्ज़ी के अनुसार पूरा पर्दा करते हुए प्रोग्राम पेश करने की इजाज़त दी गयी।

इससे पहले टीवी की एक मशहूर फ़नकारह क्रीमान हमज़ा ने भी पर्दा करने का फ़ैसला किया। ये टीवी की सबसे बड़ी फ़नकारा थीं। उनको उन लोगों ने नौकरी से अलग कर दिया तो उन्होने इस्लामी प्रोग्राम पेश करने के लिये टीवी के प्रोग्राम के लिये एक व्यवस्था बनायी लोगों ने उनकी मदद की और वो इसमें कामयाब हुईं, इनके प्रोग्राम बहुत प्रसिद्ध हुए और सारी दुनिया में पसन्द किये जाने लगे। इनका प्रोग्राम इन लोगों के लिये खुद एक चैलेंज बना गया। कहने का अर्थ कि मीडिया में इस तरह के इस्लामी रूझान पैदा हो गये हैं और क्षेत्र बढ़ता ही जा रहा है।

भारत में हमको इस स्थिति का अन्दाज़ा नहीं है। इस्लामी दावत की जो शक्लें दुनिया के दूसरे भागों में अपनायी जा रही हैं, हमें उनका ज्ञान नहीं। इसी तरह पत्रकारिता में जो बहुत श्रेष्ठ स्तर की पत्रिकाएं है, उच्चस्तरीय किताबें हैं, चाहे वो अरबी हो या अंग्रेज़ी, या दूसरी ज़बानों में, वो विभिन्न संस्थाओं से यहां तक कि यूरोप के विभिन्न देशों से निकल रहीं हैं। उनसे हमारा संबंध नहीं रहता लेकिन ये वो साधन हैं जो मार्ग (ज्तमदके) निश्चित करते हैं। उनके अध्ययन से मायूसी के बजाए उम्मीद पैदा होती है और आशाएं (व्चजपउपेउ) बढ़ती हैं। मुसलमानों में इनसे जो लोग परिचित हैं इन तमाम चीज़ों वो बहुत आशावादी हैं। मीडिया या प्रचार प्रसार के साधन से यूरोप में बहुत अधिक संख्या में ज्ञानी लोग मुसलमान हो रहे हैं। उनसे ये साधन इन्टरव्यू करते हैं, इसका भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।

दिल्ली में दिसम्बर 2003ई0 में एक फ़िक्ही वर्कशाप हुआ। इस अवसर पर एक मुसलमान ज्ञानी से मुलाक़ात हुई, जो अमरीका से आये थे, ये मिस्री मूल के थे और अमरीका में एक शिक्षण संस्था के ज़िम्मेदार हैं। उनसे अमरीका और यूरोप के बारे में बातचीत हुई, 9 सितम्बर के बाद से इस्लामी दावत के काम के सिलसिले में विचारों का आदान–प्रदान हुआ। उन्होने बताया कि एक ओर सख़्त कार्यवाहियां हो रही हैं जो बहुत तकलीफ़ पहुंचाने वाली हैं, लोग जेलों में हैं, उनको कष्ट पहुंचाया जा रहा है। इस्लामी सरगर्मियों व मुसलमानों की नक़ल व हुरमत की निगरानी हो रही है। इस्लाम के विरुद्ध मीडिया सख़्त विरोधी प्रोपगन्डा कर रहा है। मगर दूसरी ओर इसकी जो प्रतिक्रिया हो रही है, वो प्रतिक्रिया इस्लाम के हक़ में जा रही है। मीडिया के विरोधी प्रोपगन्डे की प्रतिक्रिया के तौर पर लोगों में इस्लाम की हक़ीक़त जानने की फ़िक्र पैदा हो रही है और इस्लामी लिट्रेचर के अध्ययन का रूझान बढ़ रहा है। इस कारण से अत्यधिक संख्या में लोग मुसलमान हो रहे हैं। उन्होने खुद ये बताया कि बहुत तेज़ी से लोग इस्लाम की प्रति आकर्षित हो रहे हैं। ...(शेष पेज 15 पर)

मदरसा बोर्ड के द्वारा क्या हो रहा है

मुहम्मद सिबग़त उल्लाह नदवी

सरकारी मदरसा शिक्षा बोर्ड जो हर राज्य व केन्द्र सरकार के एजेन्डे में होता है। पिछली संप्रग सरकार के एजेन्डे में भी यह था जिसकी स्थापना न हो सकी। वर्तमान मोदी सरकार ने भी अपने एजेन्डे में इस बात को शामिल किया है। फिलहाल देश के बहुत से राज्यों में इस प्रकार के बोर्ड हैं जहां कर्मचारियों को सरकार की ओर से अच्छा वेतन दिया जाता है और वे इससे ख़ुश हैं। उनके वेतन को देखकर दूसरे मदरसों के व्यवस्थापकों का भी प्रयास होता है कि उनका मदरसा सरकार के अधीन हो जाए। शिक्षकों व कर्मचारियों को अच्छे वेतन मिलने लगें और कर्मचारियों की भर्ती में रिश्वत के द्वारा व्यवस्थापकों की जेबें भी गर्म हों। इस प्रकार देश में सरकारी मदरसों की बहुत बड़ी संख्या है। उनमें से किसी भी मदरसे में शिक्षा के नाम पर दिखावे के लिए प्राइमरी शिक्षा के एक मकतब के सिवा कुछ नहीं होता यद्यपि वहां बोर्ड की परीक्षांए अवश्य करायी जाती हैं। जो हर राज्य में अलग–अलग क्लास के नामों से होती हैं। जैसे मुंशी, अदीब, कामिल, तहतानिया, फ़ौक़ानिया, मौलवी, आलिम और फ़ाज़िल इत्यादि यह सभी डिग्रियां स्कूल कालिजों और यूनीवर्सिटी के समान होती हैं। यानि वहां शिक्षा कुछ भी नहीं दी जाती, शिक्षा के नाम पर केवल बोर्ड की परीक्षा के फ़ार्म भरवाने के केन्द्र के तौर पर उनका इस्तेमाल होता है। इसमें कोई शक नहीं कि बोर्ड की डिग्रियों के द्वारा मुट्ठी भर मुसलमानों को जिनको उंगलियों पर गिना जा सकता है, सरकारी नौकरी मिल जाती है। इसी लालच में मुसलमान अपने बच्चों को मदरसा बोर्ड की परीक्षाएं दिलवाते रहते हैं और उनका शैक्षिक कैरियर बरबाद करते रहते हैं।

मुसलमान जहां इस बात से ख़ुश होते रहते हैं कि मदरसा शिक्षा बोर्ड के कारण बिना पढ़ाए वे अपने बच्चों को डिग्रियां दिलाते हैं, मदरसों के व्यवस्थापक इस बात से ख़ुश होते हैं कि उन्हें उनके वेतन के बारे में ज़्यादा माथापच्ची नहीं करना पड़ता, क्योंकि यह ज़िम्मेदारी सरकार उठा लेती है। कर्मचारियों को इस बात की ख़ुशी होती है कि सरकारी नौकरों की तरह उन्हें भी दूसरी सहूलतों के साथ अच्छा वेतन मिल जाता है। बहुत से मुसलमान इस पहलू से सोचते हैं कि मदरसा बोर्ड की स्थापना से सरकारी ख़र्च पर मुस्लिम छात्रों की दीनी शिक्षा के साथ सांसारिक शिक्षा की समस्या भी हल हो जाती है। इसलिए वे राज्य व समुदाय के स्तर पर मदरसा बोर्ड की स्थापना की वकालत करते फिरते हैं लेकिन भूल जाते हैं कि सरकार को उनकी दीनी शिक्षा से क्या मतलब हो सकता है। वह तो वही शिक्षा देगी जो काम न आए और वही हो रहा है जो मदरसे बोर्ड के अधीन चलते हैं वहां दीनी क्या दुनियावी शिक्षा भी नहीं दी जाती है। कोई भी देख सकता है कि बोर्ड की डिग्री रखने वाले मुसलमानों की बहुत बड़ी संख्या मौजूद तो है लेकिन ज्ञान से ख़ाली है। ऐसी डिग्रियों से उनका, कुन्बे का या मिल्लत का क्या भला हो सकता है यह सोचने की बात है। अब तो देखा जा रहा है कि जब मदरसा बोर्ड से इतनी आसानी से परीक्षाएं हो जाती हैं तो ग़ैर मुस्लिम भी बोर्ड की डिग्रियां हासिल करने लगे हैं क्योंकि वे समझते हैं कि पढ़ना तो कुछ नहीं सिर्फ़ डिग्रियां हासिल करना है, लेकिन अब बात डिग्रियों की भी नहीं रही, सरकारी मदरसों के द्वारा मुसलमानों को शिक्षा पाने से दूर करने का काम तो पहले से हो रहा था अब उनका अक़ीदा भी ख़राब करने की कोशिश हो रही है। सरकारी मदरसों के पाठ्यक्रम में ऐसे–ऐसे विषय शामिल कर दिये गए हैं या परीक्षाओं के परचे इस प्रकार से बनाए जा रहे हैं जो उन्हें इस्लाम से अनभिज्ञ और देश के बहुसंख्यकों के धर्म व आस्थाओं से क़रीब करने वाले हैं।

आर.एस.एस. ने लम्बे अर्से से सरकारी कार्यालयों में अनुचित हस्तक्षेप किया है, अब केन्द्र में मोदी की सरकार बनने के बाद मुसलमानों से संबंधित सरकारी संस्थाओं पर उसके प्रभाव पड़ने लगे हैं। पिछले दिनों उत्तर प्रदेश शिक्षा बोर्ड के कामिल अरबी फ़ारसी दोम की परीक्षाएं हुईं उसमें मुताला मज़ाहिब (सुन्नी व शिया) के पर्चे में सवाल कैसे आए, उनको देखकर आप समझ सकते हैं कि मदरसा बोर्ड का प्रयोग कितना ग़लत हो रहा है। मुसलमानों को क्या पढ़ने और जानकारी रखने के लिए कहा जा रहा है। आठ सवालों पर आधारित प्रश्नपत्र में पांच प्रश्नों के उत्तर अनिवार्य थे। सात हिन्दु धर्म से संबंधित थे और एक सिख धर्म से संबंधित था, और प्रश्न भी ऐसे–ऐसे कि जिनको पढ़कर ही बेचैनी होने लगती है। पहला प्रश्न यह था कि ''हिन्दुइज़्म'' के परिचय के विषय पर एक निबन्ध लिखिए, दूसरा प्रश्न यह था कि हिन्दु धर्म में सबसे बड़ा त्योहार कौन सा है? उसके कारण बताइए? तीसरा प्रश्न था कि वेदो के प्रकार बताइए? और उनके बारे में हिन्दुओं की आस्था भी बताइए, चौथा प्रश्न था कि भगवद गीता के बारे में आप क्या जानते हैं? व्याख्या कीजिए? पांचवा प्रश्न यह था कि हिन्दु धर्म के विभिन्न अदवार की व्याख्या कीजिए? सातवां प्रश्न यह था कि हिन्दुओं में शादी–ब्याह के तरीक़ों को लिखिए और आठंवा प्रश्न यह था कि रामायण में किस कथा का उल्लेख है? संक्षिप्त में लिखिए, विभिन्न धर्मों के नाम पर केवल छठा सवाल सिख धर्म से संबंधित था यानि सिखों के कितने गिरोह हैं और उनमें गुरूनानक जी का क्या महत्व है? यह सर्वधर्म अध्ययन का प्रश्न पत्र है या हिन्दु धर्म अध्ययन का? सवाल इसका नहीं कि ऐसा किसने किया और किसके इशारे पर किया, बल्कि मदरसा बोर्ड के नाम पर मुसलमानों को कैसी जानकारी रखने को कहा जा रहा है? मदरसा बोर्ड के स्पष्टीकरण से तो यह समस्या हल होगी नहीं, सवाल इस बात का है कि हम एक सरकारी संस्था से मुसलमानों की दीनी शिक्षा की उम्मीद कैसे कर सकते हैं। अब तो उन लोगों की आंखे खुल जानी चाहिए जो मदरसा बोर्ड की स्थापना और उनसे मदरसों को सम्बद्ध करने की वकालत करते हैं।

शेषः मीडिया तथा मुसलमान

तेज़ी से इस्लामी लिट्रेचर फैल रहा है और लोग इस्लाम के बारे में ज़्यादा से ज़्यादा जानना चाहते हैं। उन्होने कहा कि थोड़ा सा जो इम्तिहान है उस इम्तिहान में तकलीफ़ ज़रूर पहुंच रही है लेकिन इसके जो नतीजे हैं वो बहुत ही खुश करने वाले हैं। वो बहुत आशावादी थे। उन्होने ये भी कहा कि ढ़ाई तीन हज़ार आदमी इस समय अमरीका की विभिन्न जेलों में हैं लेकिन हमें ये भी देखना चाहिये कि खुद मुस्लिम देशों में क्या हो रहा है? उससे अधिक बड़ी संख्या जेलों में है और इस्लामी काम की राहों में वहां के शासन की ओर से अधिक रुकावटें पैदा की जा रहीं हैं। उन्होने बताया कि मिस्र में बीस हज़ार आदमी जेलों में है। यही हाल त्यूनिस, सीरिया और ईराक़ का है। लेकिन जो लोग जेल में हैं उनके हौसले बुलन्द हैं। जेल की तकलीफ़ काटने के बाद जब निकलते हैं तो उनके इरादे वैसे ही मज़बूत होते हैं। उनकी ख़बरें प्रेस में आती रहती हैं। मिस्र में जो इख़्वानी या इस्लामी ज़हन रखने वाले पकड़े जाते हैं उनको कष्ट पहुंचाया जाता है। टार्चर होने के बाद जब वो जेल से बाहर निकलते हैं तो वो उन लोगों से ज़्यादा मज़बूत होते हैं जो इस इम्तिहान से नहीं गुज़रे। इसका अनुभव हमको खुद मिस्र के एक सफ़र में हुआ। एक ऐसे ही व्यक्ति से मुलाक़ात हुई जो कई साल जेल में रहा। उस पर उसके प्रभाव थे। वो बहुत तकलीफ़ में था। इसके बाद भी वो खुलकर अपने जज़्बात को ज़ाहिर कर रहा था और शासन की निंदा कर रहा था। हमने कहा कि अब आपको इहतियात करनी चाहिये, उसने कहा कि हमारे साथ जो हो चुका है अब उससे ज़्यादा क्या होगा? वो हमारा अब और क्या करेंगे? प्रेस में भी ये सब चीज़ें आती रहती हैं, ऐसे लोगों के हालात व जज़्बात छपते रहते हैं और ये जज़्बा व कुर्बानी जिसके बारे में प्रेस या दूसरे साधनों से पता चलता है, इस्लाम की ओर आकर्षित करने का साधन बनता है। इस भाव के उत्पन्न करने में पक्षपाती मीडिया या शासन के रवैये का भी हाथ है और इस्लामी मीडिया का भी, चाहे वो किताब की शक्ल में हो, या अख़बार और रेडियो की शक्ल में। चाहे वो कितना ही छोटा क्यों न हो उसे हर मैदान में अपना कुछ न कुछ अस्तित्व स्वीकार करना है। और कम साधनों के बावजूद उसके परिणाम प्रकट हो रहे हैं, वो परिणाम अत्यधिक आशावादी हैं।

विख्यात बाक्सर मुहम्मद अली किले

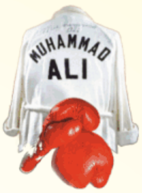

कुबूल–ए–इस्लाम और आज़माइशें

मुफ़्ती तन्ज़ीम आलम क़ासमी

मुहम्मद अली के माँ–बाप का संबंध कैथोलिक चर्च से था। माउन्ट ज़ाइन हेप्टेस्ट चर्च में इसे बपतस्मा दिया गया। लुइस विल में भी गोरे ईसाई कालों को कमतर समझते और उनके साथ श्रेष्ठता का व्यवहार बरक़रार रखते। कालों को गोरों के होटलों में बैठने और गोरों की बड़ी–बड़ी दुकानों से खाने–पीने का सामान खरीदने की मनाही थी। मुहम्मद अली ने बताया कि एक बार एक स्टोर की तरफ़ इशारा करते हुए मेरी मां ने मुझे बताया: "एक बार तुम इसके बाहर पानी के लिये चिल्ला रहे थे, मैंने स्टोर के नौकर से पानी मांगा तो उसने कहा कि हम नीग्रोज़ को चीज़ें देने लगे तो नौकरी से जवाब मिल जायेगा। फिर स्टोर का रक्षक दौड़ कर आया और ज़बरदस्ती हमें स्टोर से बाहर निकाल दिया। तुम प्यास से बिलबिलाते रहे मगर फिर भी किसी को रहम न आया।"

नस्ली श्रेष्ठता के ये प्रदर्शन मुहम्मद अली ने बचपन और लड़कपन में अनगिनत बार देखे। जब ऐलिया मुहम्मद ने इस्लाम का नाम लेकर 'नेशन आफ़ इस्लाम' के नाम से इस नस्ली श्रेष्ठता के ख़िलाफ़ आन्दोलन शुरू कर दिया तो मुहम्मद अली भी उस ओर आकर्षित हुआ। मेल्कम ऐक्स (अलहाज मलिक शहबाज़) अपनी आप बीती में बताता है कि: "कासीस किले से मेरी मुलाक़ात 1962 ई0 में हुई जब वो और उसका भाई रूडोल्फ़ डेट्राइट में ऐलिया मुहम्मद का भाषण सुनने आये थे।" कासीस किले ने मेरा हाथ दबाकर अपना परिचय कराया: मैं कासीस किले हूं। ऐलिया मुहम्मद की तक़रीर से दोनों प्रभावित हुए, इसके बाद वो लगातार मस्जिद और रेस्टोरेन्ट में ख़िताब सुनने आता रहा। अगर किसी क़रीबी इलाक़े में मेरा प्रोग्राम होता तो वो ज़रूर सुनने आता। मैंने उसे अपने घर पर भी आमन्त्रित किया। वो एक दोस्ताना मिज़ाज का साफ़–सुथरा नौजवान था।

मेल्कम ऐक्स की तरग़ीब से वो मुसलमान हो गया और उसी के मशवरे से इस्लाम कुबूल करने का ऐलान वर्ल्ड चैम्पियन बनने तक टाल दिया। मेल्कम का ख़्याल था कि अमरीकी गोरे मुसलमान कासीस को किसी सूरत में वर्ल्ड चैम्पियन बनने नहीं देगें। मेल्कम ऐक्स अपनी आपबीती में और लिखता है: "1964 ई0 में लिस्टन के साथ मुक़ाबले के मौक़े पर जब किले कपड़े बदलने गया तो तय शुदा प्रोग्राम के तहत उसके साथ ख़ुसूसी दुआ में शरीक हुआ और कामयाबी के लिये अल्लाह से मदद मांगी। मैंने किले को बताया कि वो पादरी लिस्टन के लिये ख़ास दुआंए कर रहे हैं और ये मुक़ाबला एक हक़ीक़ी लड़ाई है। खेल के मैदान में सलीब और हलाल पहली बार आमने–सामने आयें हैं। क्या तुम समझते हो कि अल्लाह ने ये सूरतेहाल तुम्हारी फ़तेह के अलावा किसी और मक़सद के लिये पैदा की है?" ये मुक़ाबले जीत कर वर्ल्ड चैम्पियन बनने के दूसरे दिन किले ने प्रेस कांफ्रेंस में ऐलान किया कि: "मैं दीन–ए–इस्लाम पर ईमान रखता हूं जिसका मतलब है कि मेरा ईमान है कि अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं और मुहम्मद स0अ0 अल्लाह के रसूल हैं। ये वही दीन है जिस पर अफ़्रीक़ा और ऐशिया के सात सौ मिलियन से ज़्यादा काले ईमान रखते हैं।" अख़बारे ने "सियाहफ़ाम मुस्लिम" की सुर्ख़ी लगायी।"

मुहम्मद अली किले ने अपने इन्टरव्यू में बताया है: "मैं अपनी शुरूआती उम्र में मानवता के इस श्रेष्ठतम दीन से परिचित न था। जब मुसलमान दोस्तों से संपर्क हुआ तो इस्लाम से भी आगाही होना शुरू हो गयी। इस्लाम के तौहीद के अक़ीदे ने मुझे ज़्यादा प्रभावित किया क्योंकि तौहीद का एक ऐसा मुकम्मल तसव्वुर किसी दूसरे धर्म में नहीं पाया जाता। जब मैंने सुना कि इस्लाम नशे की चीज़ों, शराब पीने वग़ैरह से मना करता है तो इस बात ने मुझे भी इस्लाम की तरफ़ खींचा। ऐलिया मुहम्मद की शिक्षाओं ने भी मुझ पर असर डाला और मैं मुसलमान हो गया।

ऐलिया मुहम्मद (बहुत से लोग उसकी इस्लाही जाह मुहम्मद भी करते हैं) खुद इस्लाम से पूरी तरह आगाह नहीं था और उसकी इस्लामी शिक्षाओं में नस्ली भेदभाव के अलावा और बहुत सी ख़ामियां थीं। मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी की तरह खुद को पैग़म्बर भी कहता था। मुहम्मद अली किले उसकी शिक्षाओं के संदर्भ में

लिखता हैः "मैं ऐलिया मुहम्मद की शिक्षाओं से प्रभावित होकर मुसलमान हुआ। मुझे ऐलिया मुहम्मद की इस्लामी शिक्षाओं और अस्ल इस्लाम के बीच पाये जाने वाले भेदभाव का कोई ज्ञान नहीं था लेकिन जब मैं वास्तविक इस्लाम से परिचित हुआ तो मैं जान गया कि ऐलिया मुहम्मद हक़ीक़ी इस्लाम का प्रतिनिधित्व नहीं करता। अब मेरा उससे कोई संबंध नहीं।"

अगरचे मुहम्मद अली किले ने अपने इस्लाम कुबूल करने का ऐलान 26 फ़रवरी 1964 ई0 को किया था, मगर वो इस्लाम पहले ही कुबूल कर चुका था। उसकी आज़माइशों का सफ़र सूनी लिस्टन के साथ होने वाले मुक़ाबले से ही शुरू हो गया था। उसके बारे में वो बताता हैः "ड्रेसिंग रूम में आकर ऐन्जिलो ने मुझे कहा कि अगर ख़बर वालों को पता चल गया कि मेल्कम ऐक्स की तरह तुमने भी इस्लाम से नाता जोड़ लिया है तो समझो सारा कैरियर तबाह होकर रह जायेगा। जब मैंने उसकी बात का असर न लिया तो उसने अपने भाई के ज़रिये प्रोमोटर को संदेश भेज दिया। प्रोमोटर ने मुझे बुलाया, उसने मुझ पर सवालों की बौछार कर दी, क्या ये सही है कि तुमने एक हफ़्ता पहले न्यूयार्क की मस्जिद में पूरा दिन मुसलमानों के साथ गुज़ारा और फिर अख़बार वालों के सामने उनका बचाव किया? ये सब ठीक है, मैंने जवाब दिया। क्या ये ठीक है कि आज मेल्कम ऐक्स तुम्हारी दावत पर रिंग में आया है? उसने पूछा तो मैंने कहाः जी हां। क्या तुम्हारा गार्ड और बावर्ची काले मुसलमान हैं? मैंने इसके सवाल पर कहाः आपके सवाल का एक–एक शब्द सच है।" उसने लम्बे दलायल देने और ऐलिया मुहम्मद से संबंध स्थापित करने के नुक़सानों से आगाह करते हुए कहाः अगर तुम काले मुसलमान की हैसियत से रिंग में उतरोगे तो मेरी क़िस्मत में भी ग्रहण लग जायेगा। मेरी पूंजी डूब जायेगी। मुझे अपनी पूंजी और लाभ वापस लेना है और उसका सिर्फ़ एक ही रास्ता है कि अपने घर की सफ़ाई करो और काले मुसलमानों को अपने से दूर करो। अगर मैं इनकार करूं तो? मेरे पूछने पर वो आग बबूला हो गया और चीख़ा तो मुक़ाबला ख़त्म समझो। मैं समाप्ति की घोषण कर देता हूं और तुम अपने अन्जाम को पहुंच जाओगे। अगर अपना कैरियर बचाना चाहते हो तो तुम्हें हर सूरत में ऐलान करना पड़ेगा कि तुमने किसी धर्म को नहीं स्वीकार किया है। मैंने साफ़ कर दिया किः मैं ऐसा हरगिज़ नहीं कर सकता, अगर तुम मेरे ईमान व अक़ीदे का बहाना बनाकर मुक़ाबला ख़त्म करना चाहते हो तो इसे ख़त्म कर दो।"

मुहम्मद अली ये मुक़ाबला जीत गया और अगले दिन उसने अपने मुसलमान होने का ऐलान किया तो एक तूफ़ानी प्रतिक्रिया सामने आयी। गोरे और काले दोनों ईसाई वर्ग बिलबिला उठे। बाक्सर फ्राइड पीटरसन ने ऐलान कर दिया किः मैं बतौर कैथोलिक ईसाई किले का मुक़ाबला करूंगा ताकि हैवीवेट का ताज किसी मुसलमान के सर न सज सके।

वियतनाम की जंग के लिये नौजवानों को ज़बरदस्ती भर्ती किया जा रहा था। विख्यात खिलाड़ी और धार्मिक प्रचारक इससे अलग थे, मगर मुहम्मद अली किले के लिये ये अलगाव न था वो बक़ौल लुइस विल के एक प्रोमोटर केः "वो तुम्हें (मुहम्मद अली) फ़ौज में भर्ती के इतने ख़्वाहिशमन्द नहीं जितना हैवीवेट टाइटल देशप्रेमी (गोरे ईसाई) के हाथों में देखने के ख़्वाहिशमन्द हैं।"

मुहम्मद अली का पक्ष था कि "मेरा धर्म मुझे ऐसी लड़ाई की आज्ञा नहीं देता जिसमें इन्सानी जानों का नुक़सान होता हो।" इसके बयान पर सर्किट कोर्ट के जज ने उसे फ़ौज की सेवा से अलग कर दिया था लेकिन पक्षपाती गोरे ईसाई इसे कब मानने वाले थे। फ़ौजी भर्ती के हवाले से मुहम्मद अली बताता हैः

"फ़रवरी 1966 ई0 की एक गरम दोपहर का वर्णन है कि म्यामी में एक टीवी रिपोर्टर ने मुझसे सवाल कियाः "क्या तुम लुइस विल ड्राफ़्ट बोर्ड की मंशा के मुताबिक़ अमरीकी फ़ौज में भर्ती होकर वियतनाम जाने का तैयार हो?" मैंने सख़्त लहजे में जवाब दियाः "मैं वियतकान्त से नहीं लडूंगा।" बाद में ये सवाल मुझसे बार–बार दोहराया जाने लगा तो मैंने अपना मन्जूम जवाब देना शुरू कियाः

"जितना अर्सा मर्ज़ी, मुझसे वियतनाम की जंग के बारे में सवाल करते रहो, मैं यही गीत गाऊंगा, मैं वियतकान्ग से लड़ने नहीं जाऊंगा।"

मेरा ये बयान अख़बारों में सुर्ख़ी और टीवी, रेडियो की ख़बरों में एक बड़ी ख़बर बनकर लोगों तक पहुंचा। प्रतिक्रिया भी बहुत तेज़ थी। हमारे घर में तीन फ़ोन थे और वो लगातार बज रहे थे। एक गोरे ने फ़ोन पर कहाः अगर मेरे पास बम होता तो मैं तुम्हें जहन्नम भेज देता। एक औरत बोल रही थीः काले हरामी, ख़ुदा करे तुम्हें कल ही फ़ौज में भर्ती करके गोली से उड़ा दें। तीसरी

आवाज़ थीः हब्शी! तुम रात ख़त्म होने से पहले मर चुके होगे। कमो बेश ऐसे ही फ़ोन आ रहे थे।

बिट्रेन में विख्यात गणितज्ञ और साहित्यकार ब्रिटेन्ड रसेल का भी फ़ोन आया। मैं उसे नहीं जानता था। इसलिये उसे भी सख़्त लहजे में कहाः आख़िर हर एक मेरी जान के पीछे क्यों पड़ा है? मैं कोई राजनीतिज्ञ या लीडर नहीं हूं, केवल एक खिलाड़ी हूं। उसने कहाः वियतनाम की जंग बाक़ी जंगो से ज़्यादा वहशतनाक है और चूंकि एक अन्तर्राष्ट्रीय चैम्पियन के चारों ओर असरार का एक हाला बना दिया है इसलिये लोग उसकी सोच और उसके ख़्याल के बारे में लगे रहते हैं और तुमने सबको हैरान करके रख दिया है। मैंने उसे इंग्लैन्ड में हेनरी के साथ अपना मुक़ाबला देखने की दावत दी और आदत के अनुसार फ़िक़रा कसाः तुम इतने गूंगे नहीं हो जितने नज़र आते हो। बाद में जब मुझे उसकी शख़्सियत का इल्म हुआ तो बहुत अफ़सोस हुआ। मैंने फ़ौरन क्षमायाचना का ख़त उसे लिखा उसने जवाब में लिखाः

"मैंने तुम्हारा ख़त बड़ी तौक़ीर से पढ़ा है। आने वाले महीनों में वाशिंगटन के शासक तुम्हें हर प्रकार से हानि पहुंचाने की कोशिश करेंगे। तुमने अपने अवाम, दुनिया भर के मक़हूर व मजबूर जनता की भावनाओं का बड़े साहस से प्रतिनिधित्व किया है और ये अमरीकी ताक़त के मुंह पर एक तमाचा है। वो तुम्हें हराने की कोशिश करेंगे क्योंकि तुममे ऐसी बेपनाह ताक़त की अलामत है जिसे वो तबाह नहीं कर सकते और ये ताक़त है लोगों के जागरूक होने की, जिसे ख़ौफ़ और ज़ुल्म के आगे अपनी और ज़िल्लत बर्दाश्त नहीं। मेरी भरपूर मदद तुम्हारे साथ है।"

फ़ौज भर्ती के हवाले से मुहम्मद अली किले और बताता हैः "मुझे फ़्लोरिडा में ड्राफ़्ट बोर्ड के इम्तिहान में बैठने को कहा गया। परीक्षा केन्द्र में मैंने "क्लासीस ऐक्स" के नाम से हस्ताक्षर किये। निगरां ने पूछा "एक्स का क्या मतलब है? मैंने बताया कि मैं मुसलमान हो चुका हूं, एक्स इसी की नुमाइन्दगी करता है। जबकि इम्तिहान में मैं फ़ेल हो गया था मगर उन्होंने लुइस विल में दोबारा बुला लिया। जार्जिया के एक वकील ने कहाः इस हब्शी को ड्राफ़्ट करो। मेरे ख़िलाफ़ मुहिम शुरू हो गयी। लुईस विल में भी मैं फ़ेल ही रहा था मगर फिर भी मेरा पीछा न छोड़ा गया। रिपोर्टर लगातार मुझे तंग कर रहे थे और मेरा एक ही जवाब थाः मैं केवल अमन का इच्छुक हूं, अपने लिये और दुनिया भर के लिये अमन।"

शिकागो में मुक़ाबला होने वाला था कि प्रोमोटर ने मुझे बताया कि अगर मैंने अपने म्यामी वाले बयान पर माफ़ी न मांगी तो मुक़ाबला रद्द हो जायेगा और मैं डूब जाऊंगा। उसने मुझसे कहा कि एक बजे शिकागो के मेयर को फ़ोन कर दूं। प्रोमोटर की बहुत ज़्यादा ज़िद पर मैंने फ़ोन किया और कहा कि मैं माफ़ी मांगना चाहता हूं मगर उसने कमीशन के सामने पेश होने के लिये कहा। कमीशन के सामने मैंने कहा कि "मैंने म्यामी मे जो कुछ कहा था वो मुझे ड्राफ़्ट बोर्ड के अफ़सरों के सामने कहना चाहिये था। इस पर मैं माफ़ी चाहता हूं।" बोर्ड की ज़िद थी कि मैं अपने बयान पर माफ़ी मांगू मगर मैंने साफ़ कह दिया "नहीं मैंने जो कुछ कहा था, उस पर क्षमा मांगने को तैयार नहीं हूं।" शिकागो के मेयर ने मुक़ाबला रद्द कर दिया।

इसके बाद मुझे अमरीका के राष्ट्रपति की ओर से ख़त मिला 28 अप्रैल 1968 ई0 को हाउस्टन के लोकल बोर्ड नम्बर 61 के सामने रिपोर्ट करूं। मुझे भर्ती करने के लिये भर्ती का स्तर भी गिरा गया था। मगर अपने पक्ष से न हटने का मेरा फ़ैसला अटल था। मुक़द्दमा कोर्ट में चला गया। अदालत में मैंने साफ़ तौर पर कहाः "मुझे अपना दीन दुनिया की हर चीज़ से ज़्यादा प्यारा है और इसके लिये मैं हर कुर्बानी देने को तैयार हूं।" अदालत ने मुझे पांच साल क़ैद और दस हज़ार डालर के जुर्माने की सज़ा सुनाई। एक जज ने कहाः "अगर इस व्यक्ति को आज़ाद कर दिया गया तो फिर पूरे काले अमरीकी मुसलमान हो जायेंगे और जंग से बचने के लिये इसकी तरह बहाने ढूंढे जायेंगे।" मुझे मिसेस पी के एक सफ़ेद बालों वाले सफ़ेद बूढ़े के शब्द कभी नहीं भूल सकते, "मैं तुम्हारे धर्म में विश्वास नहीं रखता हूं, मगर मैं चाहता हूं कि सब तुम्हारी तरह साहस का प्रदर्शन करें।" इस्लामी दुनिया में इस सज़ा के ख़िलाफ़ सख़्त प्रतिक्रिया हुई और अमरीकी शासन ने विरोध से परेशान होकर सज़ा टाल दी और मुझे रिहा कर दिया। जून 1970 ई0 में सुप्रीम कोर्ट ने भी सज़ा समाप्त कर दी।

4 अगस्त 1964 ई0 को इन्डियाना की एक माडल गर्ल से इस शर्त पर शादी की कि वो इस्लाम क़ुबूल करके इस्लामी लिबास पहनेगी और वर्तमान ज़िन्दगी जीने का तरीक़ा छोड़ देगी। कुछ अर्से उसने अपने वादे का लिहाज़ किया 1965 ई0 में मुहम्मद अली उसे तलाक़ देने पर मजबूर हो गया। मुहम्मद अली ने उसके बाद दो शादियां कीं जिनसे नौ बच्चे पैदा हुए। उनकी एक बेटी लैला भी बाक्सर है और आज तक कोई बाक्सर उसे हरा नहीं पायी है।

मीडिया और दीनी मदरसे

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

मीडिया महज़ ख़बर पाने का ज़रिया ही नहीं बल्कि कशमकश का एक बड़ा मैदान भी है। सामराज का आलमी तसल्लुत, तहज़ीबे मग़्रिब की तश्कील और आलमी मन्डियों पर क़ब्ज़े का खेल इसी मीडिया की बिसात पर खेला जाता है। आज हर ख़बर व इश्तिहार, हर डाक्यूमेन्ट्री और टाक शो, हर फ़िल्म और ड्रामा समाज पर बराहे रास्त अपना असर छोड़ रहा है। किसी मासूम को संगीन मुजरिम और किसी दरिन्दा सिफ़त को मसीहा साबित करना मीडिया के लिए बिल्कुल आसान है। मीडिया की इस ताक़त का अंदाज़ा हमें अब हुआ है जबकि हमारे दुश्मनों ने मीडिया की इस असर आफ़रीनी और उसके मुअस्सिर किरदार का इदराक बहुत पहले कर लिया था।

यूरोप व अमरीका ने हमेशा से मुसलमानों को अपना सियासी, दीनी और सक़ाफ़ती दुश्मन समझा, और उन्हें इस बात का एतराफ़ भी है कि सिर्फ़ इस्लाम ही उन्हें बराहे रास्त चैलेंज करता है, क्योंकि मग़्रिब के मुक़ाबले यही एक मख़सूस तहज़ीब है जिसके वाबस्तगान अपने तमद्दुन की बरतरी के क़ाएल हैं। यह एक मुख़्तलिफ़ और मुतसादिम तहज़ीब है जिसके पैरोकार अपने मज़हब और अपनी तहज़ीब की आफ़ाक़ियत के दाई हैं और यह यक़ीन रखते हैं कि उनकी बज़ाहिर ज़वालपज़ीर लेकिन बालातर ताक़त यह तक़ाज़ा करती है कि "इस्लामी तमद्दुन" को दुनिया में फैलाया जाए। यही वजह है कि नाइन इलेवेन के ड्रामे के बाद सदर बुश ने अपने ख़िताब में खुलकर कहा कि हमारा अस्ल मुक़ाबला सियासी इस्लाम और इस्लामी बुनियाद परस्ती से है।

इसके वाक़्ये के बाद मग़्रिबी ताक़तों ने दुनिया को "इस्लामी दहशतगर्दी" के उनवान से एक नया मौज़ू दिया जिस पर आलमी मीडिया ने बहसों का आग़ाज़ किया। सियासी बयानात जारी हुए, सच्ची–झूठी ख़बरें शाया की गई, डाक्यूमेन्ट्रीज़ तैयार हुईं, फ़िल्में बनायी गयीं और जब इन प्रोपगन्डों की कुछ मुख़ालिफ़त हुई तो मीडिया ने अपना ज़ोर कुछ कम कर दिया लेकिन उस वक़्त तक उमूमी ज़हनसाज़ी हो चुकी थी और मश्रिक़ व मग़्रिब के दानिशवर भी खुले लफ़्ज़ों में और कभी बन्द जुमलों में यह बात कहने लगे:

"Every Muslim is not a Terrorist But Every Terrorist is a Muslim."

(हर मुसलमान दहशतगर्द नहीं होता लेकिन हर दहशतगर्द मुसलमान होता है)

मग़्रिबी मीडिया के नक़्शे क़दम पर चलते हुए मुल्की मीडिया ने भी यह प्रोपगन्डा शुरू किया कि क़ुरआन मजीद में हिन्दुओं को काफ़िर कहकर उनसे न सिर्फ़ नफ़रत का इज़हार किया गया है बल्कि उनके क़त्लेआम की इजाज़त भी दी गयी है। इसलिए अस्ल मसला ख़ुद क़ुरआनी तालीमात का पैदाकरदा है, जिसके नतीजे में तशद्दुद और इन्तिहा पसंदी का मिज़ाज परवान चढ़ता है, इसलिए ज़रूरत क़ुरआनी मराकिज़ यानि मदरसों के निज़ाम को तब्दील करने की है, ताकि किसी तालिबे इल्म में जिहाद व क़िताल का तसव्वुर भी पैदा न हो, चुनान्चे मदरसों के निसाबे तालीम से उन क़ुरआनी आयात और अहादीस को निसाब से ख़ारिज करने की मांग की जो जिहाद, हिजाब, यहूदियों की मुस्लिम दुश्मनी और कुफ़्फ़ार से मुहब्बत व दोस्ती की मुख़ालिफ़त वग़ैरह से मुताल्लिक़ हो।

आपको याद होगा कि जब फ़रवरी 2002ई0 में जब मौजूदा हुकूमत ही बरसरे इक़्तिदार थी तो वज़ीरे आज़म मिस्टर वापजेई ने मदरसों के सर्वे के लिए चार काबीना वज़ीरों की एक कमेटी बनाई थी जिसके निगरां जनाब एल.के. आडवाणी थे, चूंकि यह सर्वे हक़ीक़त से परे महज़ अंदाज़ों और क़यासों की बुनियाद पर था इसलिए इस कमेटी ने चौंका देने वाली रिपोर्ट पेश की, जिसमें इस्लामी मदरसों को मुल्क की सालिमियत के लिए ख़तरा और ज़ुल्मात परस्ती और दहशतगर्दी की तालीमगाह बताया गया था और फिर इलेक्ट्रानिक और प्रिन्ट मीडिया ने बार–बार इन इल्ज़ामात की तशहीर की जिसके नतीजे में दारुल उलूम और नदवतुल उलमा जैसे अज़ीम इदारे भी निशाने पर आ गए थे। लेकिन

मुल्की सतह पर इसका रद्देअमल ज़ाहिर हुआ तो हुकूमत के तेवर कुछ कम हुए, फिर हुकूमत ने दूसरा तरीक़ा अख़्तियार किया और "मरकज़ी मदरसा बोर्ड" और "ग्रान्ट इन ऐड" की तजवीज़ पेश कीं ताकि मदारिस और उनके तालीमी अहदाफ़ को सरकारी गिरफ़्त में लेना और उनका अवामी राब्ता ख़त्म करना आसान हो सके जिसका लाज़मी नतीजा इस सूरतेहाल का पैदा होना है जिसका तजुर्बा हम उन्दुलुस की सरज़मीन में कर चुके हैं। अफ़सोस कि सूबा यूपी व बिहार में बहुत से मदरसे "ग्रान्ट इन ऐड" की तलाई जंजीरों में जकड़कर अपनी इफ़ादियत खो चुके।

तक़रीबन बीस साल बाद यूपी हुकूमत ने एक बार फिर मदरसों के सर्वे का सिलसिला शुरू किया, सबसे पहले इन्हीं "ग्रांट इन ऐड" मदरसों को निशाना बनाया गया, सख़्ती से जांच की गयी, काग़ज़ात खंगाले गए, ज़मीनों की मिल्कियत चेक की गयी, इमारतों की जुज़्ईयात व तफ़सीलात तलब की गयीं, हर भूला–बिसरा क़ानूनी ज़ाब्ता नाफ़िज़ किया गया, ऐसी सख़्त पकड़ से क़ानूनी मबादियात से भी नावाक़िफ़ मदरसों का बच पाना कतअन मुमकिन न था, चुनान्चे एक बड़ी तादाद नाअहल क़रार दे दी गयी, उनकी मंज़ूरियां मन्सूख़ कर दी गयीं और बहुत सी इमारतें ग़ैर क़ानूनी क़रार देकर ज़मीनबोस कर दी गयीं।

इसके बाद उन मदरसों का सर्वे शुरू हुआ जो हुकूमत से किसी भी ताऊन के बग़ैर क़ायम हैं। जो हक़ीक़त में इस्लाम के क़िले और उम्मते मुस्लिमा का पावरहाउस हैं, और यही मराकिज़ बातिल ताक़तों के निशानों पर हैं, क्योंकि यहीं से अमन व आशिती की सदांए बुलन्द होती हैं और हर उस निज़ाम को चैलेंज करती हैं जो इन्सानों को मुख़्तलिफ़ ख़ानों में बांटता है। सर्वे टीम ने पूरी दिलचस्ती दिखाई, मीडिया भी अलर्ट रहा लेकिन ख़ुदा का फ़ैसला, मदरसे हर तरह की बेक़ानूनी व बदउनवानी से पाक क़रार दिये गए, बल्कि बहुत सी ग़लतफ़हमिया और मनफ़ी प्रोपगन्डों के इज़ाले का सबब भी बने और दुनिया को एक बार फिर तस्लीम करना पड़ा कि यह वह क़िले हैं जिनकी बुनियादें मज़बूत और दीवारें आहिनी हैं और इसका निज़ामे तालीम व तरबियत उन अस्री इदारों से बदर्जहा बेहतर है जिन्हें हुकूमत की सरपरस्ती हासिल है।

सच पूछिए तो यह मदारिसे इस्लामिया ही बातिल ताक़तों की राह में रोड़े की तरह अटके हुए हैं। मुसलमानों में दीनी शऊर जगाने वाली यह शमें उन स्याह इरादों की तकमील में बहुत बड़ी रुकावट हैं। वह जानते हैं कि इन्हीं मदरसों ने हर दौर में ऐसे नामवर क़ाएदीन पैदा किये हैं जिन्होंने दुनिया की तारीख़ का धारा बदल दिया है और दीन की हिफ़ाज़त का काम ऐसे नाज़ुक हालात में अंजाम दिया जब हुकूमतें इसके चिराग़ को अपनी मज़मूम सियासतों से बुझाने में मसरूफ़ थीं। और अगर कहीं इस्लामी इक़दार को ठेस पहुंचायी जा सकी है तो वह भी उन मदारिस की गफ़लत की वजह से ही मुमकिन हुआ। यही वजह है कि मग़रिबी ताक़तों ने जहां आम मुसलमानों के ख़िलाफ़ ख़ौफ़ व हरास की फ़िज़ा बनाई वहीं मदारिस व अहले मदारिस के ख़िलाफ़ खुलकर प्रोपगन्डा किया और अपने मन्सूबों में इस बात की सराहत की कि इस्लाम पसन्द अनासिर पर क़दग़न लगाकर ही अवाम पर असरअंदाज़ हुआ जा सकता है और इस सिलसिले में मीडिया एक मुअस्सिर और कारगर हथियार के तौर पर इस्तेमाल हो रहा है।

इधर कुछ अर्सों से मदारिसे इस्लामिया ने भी इस तरफ़ तवज्जो की है, और बहुत से इस्लामी इदारों से मजल्लात व रसाएल और ख़बरनामे शाए होने लगे हैं जो फ़िक्रे इस्लामी और मुसलमानों के मसाएल पर मुश्तमिल होते हैं और बाज़ रसाएल में इस्लाम मुख़ालिफ़ और रूझानात का इल्मी तजज़िया भी किया जाता है, लेकिन मुझे माफ़ रखा जाए कि अभी हमारे आलमी इदारे भी इस सिलसिले में इब्तिदाई मराहिल से गुज़र रहे हैं, और कई दहे गुज़रने के बावजूद रसाएल व जराएद के मैदान में कोई क़ाबिले तक़लीद मेयार क़ायम न कर सके, जबकि बाज़ इदारों में मीडिया व सहाफ़त के शोबे भी क़ायम हैं लेकिन इन शोबों के ख़ातिरख़्वाह नताएज सामने नहीं आ रहे जिसकी बुनियादी वजह मीडिया के जदीद वसाएल से दूरी और हमारा वह निज़ामे तालीम है, जिसमें प्रैक्टिकल के बजाए नज़रयाती बहसों पर ज़ोर है। इसलिए ज़रूरत है कि मदरसों का मीडिया से रिश्ता मज़बूत हो और ख़ासकर मरकज़ी मदारिस में मीडिया के तजज़िये का शोबा भी क़ायम हो, जिसमें इलेक्ट्रानिक और प्रिन्ट मीडिया का जाएज़ा लिया जाए, और उसके मनफ़ी नज़रियात का मुहासबा किया जाए, इसके अलावा प्रेस और मीडिया के सामने मदरसों की हक़ीक़त पेश की जाए, अरबाबे मदारिस के इन्टरव्यूज़ जारी किए जाएं, प्रेस कान्फ्रेंस की जाए। इस तरह बहुत मुमकिन है कि मदारिस के सिलसिले में बदगुमानियों का ख़ात्मा हो और मदरसों की मानवियत व इफ़ादियत आशकार हो।

दीनी मदरसों की अहमियत मशाहीरे उम्मत की नज़र में

इन्तिख़ाब व पेशकशः मुहम्मद नजमुद्दीन मनीपुरी नदवी

"इस वक़्त उलूमे दीनिया के मदारिस का वजूद मुसलमानों के लिए ऐसी बड़ी नेमत है कि उससे बढ़कर मुतसव्विर नहीं, दुनिया में अगर इस्लाम की बक़ा की कोई सूरत है तो यह मदरसे हैं।"

(अलइल्म वल उलमाः 81) (हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह0)

"इन मकतबों को उसी हालत में रहने दो, अगर यह मुल्ला और दरवेश न रहे तो जो कुछ होगा उसे मैं अपनी आंखों से देख आया हूं, अगर हिन्दुस्तान के मुसलमान इन मकतबों के असर से महरूम हो गए तो बिल्कुल उसी तरह जिस तरह हस्पानिया में मुसलमानों की आठ सौ बरस की हुकूमत के बावजूद ग़रनाता और कर्तबा के खन्डहर और अलहमरा और बाबुल ख़ौतेन के सिवा इस्लाम के पैरों और इस्लामी तहज़ीब के आसार का कोई नक़्श नहीं मिलता, हिन्दुस्तान में आगरा के ताजमहल और लाल क़िले के सिवा मुसलामनों की आठ सौ बरस की हुकूमत और उनकी तहज़ीब का कोई निशान नहीं मिलेगा।"

(अलइल्म वल उलमाः 1/455–456) (शायर–ए–मग़्रिब अल्लामा इक़बार रह0)

"मुसलमानों की बेमक़सद तालीम के लिए यह निहायत ही ज़रूरी है कि उनकी क़ौमी दर्सगाहें बिल्कुल अलग हों, जहां उनको ख़ास उनके मज़हबी व क़ौमी मक़ासिद की बिना पर तालीम दी जाए।"

(मुसलमानों की आइन्दा तालीमः 27) (सैय्यदुत्ताइफ़ा अल्लामा सैय्यद सुलेमान नदवी रह0)

"मदरसा वह मक़ाम है जहां से पूरी कायनात का एहतिसाब होता है और पूरी इन्सानी ज़िन्दगी की निगरानी की जाती है। इसका ताल्लुक़ बराहे रास्त नुबूव्वते मुहम्मदी (स0अ0व0) से है जो आलमगीर भी है और ज़िन्दा जावेद भी। इसका ताल्लुक़ उस इन्सानियत से है जो हरदम जवां है, उस ज़िन्दगी से है जो हमावक़्त रवां और दवां है, मदरसा दरहक़ीक़त क़दीम और जदीद की बहसों से बालातर है, वह तो ऐसी जगह है जहां नुबूव्वते मुहम्मदी की अब्दियत और ज़िन्दगी का नुमू और हरकत दोनों पाए जाते हैं।"

(पा जा सुराग़े ज़िन्दगीः 90) (मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी रह0)

"इस मुल्क में दीन की बक़ा का आख़िरी ज़रिया दीनी मदारिस ही हैं। अल्लाह के बन्दो! दीनी मदरसों के मक़ाम को समझो, अगर उन दीनी मदरसों पर ज़वाल आ गया तो याद रखो! फिर तुम्हारा मुल्क भी स्पेन बन जाएगा और तुम्हारे बच्चों को कलिमा तैय्यबा और दीन पर बाक़ी रहने की कोई गारन्टी नहीं रह जाएगी।"

(तज़किरतुल सिद्दीक़ः 37–38) (आरिफ़ बिल्लाह मौलाना क़ारी सिद्दीक़ अहमद बांदवी रह0)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 10 October 2022 Volume: 14

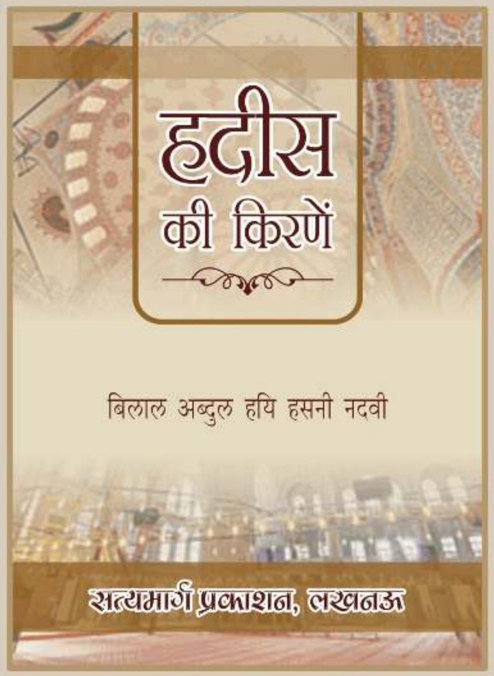

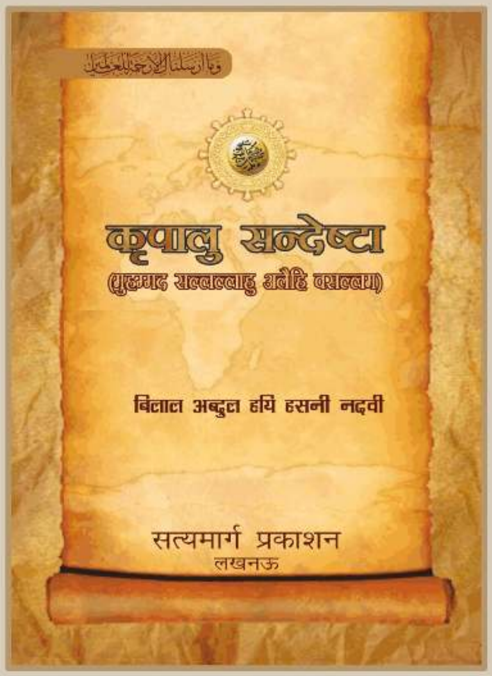

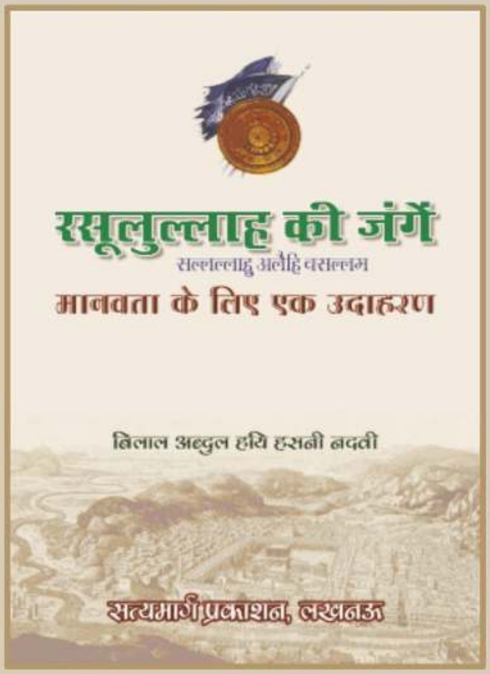

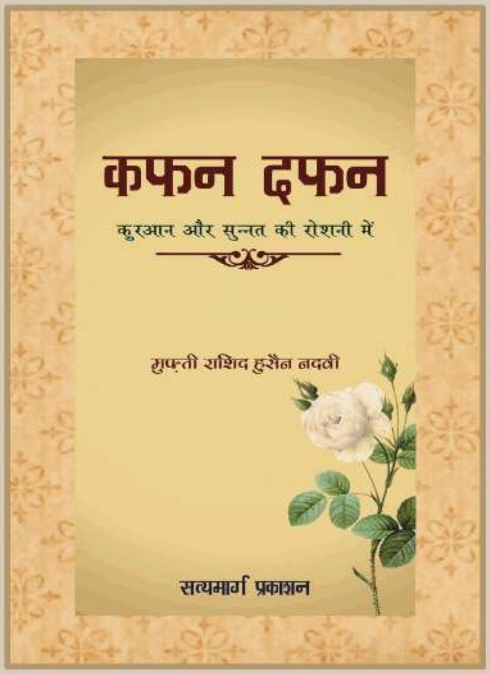

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.